भारत सरकार द्वारा प्रदत्त पंजीकृत संख्या 3653/57 डाक पंजीयन संख्या RJ/2803/02

9274

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

श्री नमस्कार महामन्त्र

णमोअरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमोआयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

वर्ष : 59 अंक 10

अक्टूबर, 2002 आश्विन, 2059

सोने की गुणवत्ता; गहनों की विविधता
एवं कलात्मक सौंदर्यपूर्ण कारीगरी के लिए
पुरे विश्वास के साथ अलंकार प्रेमी आते हैं

रतनलाल सी. बाफना; ज्वेलर्स; जलगांव

रिश्ता अटूट विश्वास का
बंधन स्वर्णिम स्नेह का!

अद्वितीय स्वर्णिम विशेषताएँ

स्वर्ण आभुषणों की नई ढेर सारी वेरायटी
अनगिनत नये डिजाईन्स हाजिर स्टॉक में !

डाग रहित ९१.६० KDM गहनों की
नई व्यापक मालिका

सौंदर्यपूर्ण 'बाजू' की विशाल रेंज

कुंदन-जडाव, मीनाकाम, ऑक्साईड पॉलीश,
छिलाई व कास्टींग काम की उच्चतम श्रेणी

हरेक गहनेपर 'वापसी विश्वसनियता' की स्पष्ट मुद्रा

चांदी बर्तनों की नई वैभवशाली मालिका

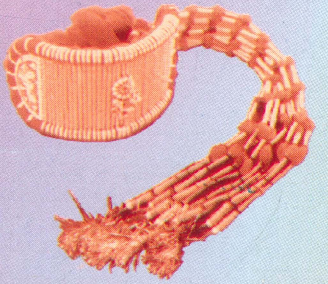

सोने के गहने, हीरों के आभुषण
सब कुछ एक ही छत के नीचे

व्यापारियों के लिए सोने के गहने एवं
चांदी पात्रों की होलसेल बिक्री सुविधा

अवश्य पधारिए!
जहाँ विश्वास हि परम्परा है!

रतनलाल सी.बाफना,ज्वेलर्स

पारस महल
चांदी भांडी शोरुम
'शुद्ध आहार शाकाहार'

सुभाष चौक, जलगाँव
दूरभाष : २२३९०३, २२५९०३,
२२२६२९, २२२६३०

नयनतारा
स्वर्णालंकार शोरुम
डायमंड शोरुम
(रविवार अवकाश)

कलामुद्रा

सावधान : हमारी कहीं भी शाखा एवं एजंट नही!

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।

- **प्रकाशक**
  प्रकाशचन्द डागा
  मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
  दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
  जयपुर-302003 (राज.), फोन नं. 565997

- **संस्थापक**
  श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

- **सम्पादक**
  डॉ. धर्मचन्द जैन, एम.ए., पी-एच.डी.

- **सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र**
  3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
  जोधपुर- 342005(राज.)
  फोन नं. 0291-747981

- **सम्पादक मण्डल**
  डॉ. संजीव भानावत, एम.ए. पी-एच.डी.

- **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
  रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
  डाक पंजीयन सं. RJ2803/02

- **सदस्यता**

स्तम्भ सदस्यता	11000 रु.
संरक्षक सदस्यता	5000 रु.
आजीवन सदस्यता देश में	500 रु.
आजीवन सदस्यता विदेश में	100$(डालर)
त्रिवर्षीय सदस्यता	120 रु.
वार्षिक सदस्यता	50 रु.
इस अंक का मूल्य	10 रु.

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

आसणगओ न पुच्छिज्जा,
नेव सेज्जागओ कया।
आगम्मुक्कुडुओ संतो,
पुच्छिज्जा पंजलीउडो।।

—उत्तराध्ययन सूत्र १.२२

आसन या शय्या पर बैठा,
गुरुदेव से कुछ पूछे न कभी
आ समीप उकडू-आसन से,
पूछे 'सविनय ही' प्रश्न सभी।।२२।।

अक्टूबर 2002
वीर निर्वाण सं. 2528
आश्विन, 2059

वर्ष : 59 **अंक** : 10

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन : 562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रमणिका

प्रवचन / निबन्ध

श्रद्धा, समर्पण और समाधिमरण के आदर्श : सागरमल जी महाराज	: आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	7
श्रवण और आचरण : मुक्ति का वरण	: महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.	15
धर्ममार्ग में बाधक तीन आसक्तियाँ	: आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरि जी	20
जैन साधना में सामायिक	: प्रवर्तक श्री कुन्दनऋषिजी म.सा.	26
सेवा का महत्त्व	: श्री कन्हैयालाल लोढ़ा	29
धर्मवीर लोंकाशाह : इक्कीस तथ्य	: श्री दिलीप धींग 'जैन'	34
जैन संस्कृति : सार्थक अस्तित्व की तलाश	: कुमार अनेकान्त जैन	37
महावीर का स्वास्थ्य चिन्तन	: श्री चंचलमल चोरड़िया	43
वृद्धावस्था में कैसे जीएँ?	: श्री पूनमचन्द चौपड़ा	44
महामंत्र णमोक्कार : स्वरूप एवं माहात्म्य(11)	: श्री जशकरण डागा	48
समय का सदुपयोग	: श्री लोकेश जैन	50

विचार / आगम परिचय / सूक्ति-विवेचन

अमृत - वचन	: आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	6
धर्म का मूल : विनय	: श्री भंवरलाल मेहता	14
जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ	: प्रो. चाँदमल कर्णावट	32
पापनाशक मंत्र	: पंन्यासप्रवर भद्रंकरविजय जी	42
दशवैकालिक सूत्र	: डॉ. अमृतलाल गांधी	45

कथा / कविता / प्रसंग

गांधीजी और उपहार	: श्री आनन्दराज धीसूलाल तलेसरा	19
नवकार मंत्र पर अटूट श्रद्धा	: श्री माणकचन्द कर्णावट	30
कुण्डरीक	: संकलित	31
नमन करें हम	: डॉ. चन्दनबाला मारू	36
धर्म हमारी असली पूँजी	: श्री नितेश नागोता	47
पान खाना छोड़िए	: आर. प्रसन्नचन्द चोरड़िया	51
आप तो मानव हैं	: श्री दिलीप धींग 'जैन'	55

स्तम्भ / अन्य

सम्पादकीय	: डॉ. धर्मचन्द जैन	3
जिनवाणी पर अभिमत	: संकलित	52
साहित्य-समीक्षा	: डॉ. धर्मचन्द जैन	54
समाचार-संकलन	: संकलित	56
श्रद्धांजलि	: संकलित	69
साभार–प्राप्ति–स्वीकार	: संकलित	73

सम्पादकीय

धन और धर्म

डॉ. धर्मचन्द जैन

मनुष्य के भौतिक जीवन के लिए धन एवं नैतिक-आध्यात्मिक जीवन के लिए धर्म आवश्यक है। धन के द्वारा भोजन, वस्त्र, आवास, औषधि, उपकरण, वाहन आदि की प्राप्ति होती है, जो मानव के जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक है तथा धर्म उसके नैतिक मनोबल एवं आध्यात्मिक मूल्यों की रक्षा करता है और उनमें वृद्धि करता है। धन जहाँ सुविधाओं का साधन है वहाँ धर्म शान्ति, संतोष एवं सच्चे आनन्द का स्रोत है।

धन और धर्म के द्वन्द्व को लेकर विवाद होता रहता है। कई लोग कहते हैं कि धन होगा तो धर्म होगा, धन नहीं तो धर्म नहीं। कई लोग धर्म से धन की प्राप्ति स्वीकार करते हैं। कई इन दोनों को परस्पर विरोधी मानते हैं तथा कुछ इनको परस्पर पूरक अंगीकार करते हैं।

मनुष्य की प्रवृत्ति का आकलन किया जाय तो वह धन के प्रति जितना आकर्षित होता है, उतना धर्म के प्रति नहीं। धन उसे अपनी सुरक्षा का साधन प्रतीत होता है। धर्म को यदि धन-प्राप्ति का हेतु या आधार बता दिया जाय तो वह धन के लक्ष्य से धर्माचरण करने के लिए भी तत्पर हो जाता है। हनुमानजी के मन्दिर में प्रतिदिन जाने वाले कई भक्त इस प्रकार की श्रेणी में आते हैं। नाकोड़ा पार्श्वनाथ के मन्दिर में भी ऐसे श्रद्धालुओं की कमी नहीं। वहाँ अन्य भौतिक इच्छाओं की पूर्ति को भी लक्ष्य बनाया जाता है, किन्तु विचार का अभी मुख्य बिन्दु धन है। धन एक साधन है, जिससे भूमि, भवन, आभूषण, वाहन, भोजन, वस्त्र आदि क्रय किए जा सकते है। धन से विवाह, जन्मोत्सव आदि के समारोह बड़ी शान–शौकत से आयोजित किए जाते हैं। धन है तो शोहरत है, प्रतिष्ठा है। लोग धन से प्रभावित होकर धनिक के दोषों को गौण कर देते हैं तथा उसे प्रतिष्ठा एवं सम्मान देते हैं। धन की संसार में जो प्रतिष्ठा है, उसको देखकर ही किसी कवि ने कहा है–

टका धर्मः टका कर्म, टकैव परमं सुखम्।
यस्य पार्श्वे टका नास्ति, हाटके टकटकायते।।

टका (धन) ही धर्म है, टका ही कर्म, टका ही परम सुख है। जिसके पास टका नहीं है, वह बाजार में मात्र देखता रह जाता है। इस श्लोक में धन को लेकर अतिशयोक्ति की गई है। तथापि अनादिकाल से ही धन के महत्त्व को स्वीकार किया गया है। वेदों में धन एवं समृद्धि की याचना कई बार की गई है।

धन का अर्जन मनुष्य की जिजीविषा से जुड़ा हुआ है। प्रत्येक मनुष्य

जीना चाहता है। जीने के लिए उसे आवश्यक साधन जुटाने हेतु धन की आवश्यकता होती है। जीवन को सुरक्षित करने के लिए अर्जन की प्रवृत्ति धीरे–धीरे सामाजिक मान–प्रतिष्ठा और असीमित भोगोपभोग की सामग्री से जुड़ जाती है। यही लोभ मनुष्य को संसार के मायाजाल में फंसा देता है। धन का संबंध सामूहिक कार्यों, उत्सवों आदि से जुड़ा हुआ है। धन के महत्त्व को प्रतिष्ठापित करते हुए गुणों को गौण कर दिया गया तथा सभी गुणों को धन के आश्रित बता दिया गया– 'सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति।' सारे गुण जब धन के आश्रित बता दिए गए तो फिर लोग धन के पीछे क्यों न बावले हों?

धर्म की ओर आकर्षण दूसरे नम्बर पर आता है। जब व्यक्ति संसार से उद्विग्न हो जाता है तब धर्म की शरण में आता है। कभी सत्संग के द्वारा वीतरागवाणी सुनकर भी धर्म की ओर आकर्षण होता है। कभी धन आदि के प्रलोभन से भी व्यक्ति धर्म की ओर प्रवृत्त होता है। धार्मिक जनों का अध्ययन किया जाय तो उनकी मनः स्थिति भिन्न–भिन्न प्रकार की मिलती है। कोई समाज में प्रतिष्ठा एवं सम्पर्क वृद्धि के लिए भी धर्मस्थानों पर पहुंचते हैं। ऐसे लोग तो अंगुलियों पर गिनने योग्य होते हैं जो धर्म को आध्यात्मिक एवं नैतिक उन्नयन का साधन बनाते हैं। कई लोग तो लोक–लाज से धर्म क्रिया करते हैं और कई दूसरें की प्रेरणा से इस ओर प्रवृत्त होते हैं।

धर्म-क्रिया किसी भी कारण से प्रारम्भ की हो, किन्तु स्वाध्याय एवं सत्संग के प्रभाव से यदि धर्म का सच्चा स्वरूप समझ में आ जाय एवं वह अपनी चेतना को निर्मलता की ओर अग्रसर कर सके तो धर्म का वह आचरण भी सार्थक हो जाता है। किन्तु धर्मस्थानों में आकर भी यदि भौतिक आकांक्षाओं की पूर्ति या धन-प्राप्ति को ही लक्ष्य में रखा तो वह धर्म का आराधन धन का ही आराधन हो जाता है। धर्म के वे आराधक विरल हैं जो भौतिक धन–सम्पदा को ठुकराकर / महत्त्वहीन या अनुपयोगी समझकर धर्म के मार्ग में प्रवृत्त होते हैं।

जब पर्याप्त धन कमा लेंगे तब धर्म-क्रिया करेंगे, यह समझना अपने को धोखा देना है। धर्म को कभी भी आचरण में लाया जा सकता है। नैतिकता, प्रामाणिकता एवं मन की निर्मलता के साथ प्रवृत्ति करने में धन की अपर्याप्तता बाधक नहीं, अपनी कमजोरी ही बाधक बनती है। धर्माचरण में धन सहायक बन सकता है, किन्तु धन के प्रति आसक्ति एवं लोभ धर्माचरण को अवरुद्ध करते हैं। धन और धर्म परस्पर विरोधी तो नहीं, किन्तु जीवन में धर्म उतर जाने पर धन गौण हो जाता है। तब धन अर्जन एवं उपयोग किया जा सकता है, किन्तु वह व्यक्ति को बांध नहीं पाता। धन एवं धर्म का इतना संबंध अवश्य है कि निष्काम भाव से प्रदत्त या विसर्जित धन धर्म में सहायक बन सकता है, और निष्काम भाव से किया गया धर्म कदाचित् बाह्य

प्रतिकूलताओं का निराकरण करने में सहायभूत बन जाता है।

प्रश्न यह है कि क्या धर्म का आचरण बिना धन के संभव है? उत्तर में कहना होगा कि धर्म के शुद्धाचरण के लिए धन की कहीं भी कोई आवश्यकता नहीं है। हम जितना अधिक धर्म को धन से जोड़ते हैं, उतनी ही धर्म में विकृति आती है। धर्म के आचरण हेतु मनुष्य को तीन साधन प्राप्त हैं– 1. मन 2. वचन और 3. काया। मन से शुभ चिन्तन करना, सबका भला चाहना, उसे राग–द्वेष से रहित बनाना–इसमें धन की कहां आवश्यकता है। इसी प्रकार वचन से निरवद्य भाषा का प्रयोग करने में कहां धन की जरूरत है। काया या शरीर से भी सद्प्रवृत्तियों में लगना– सामायिक, दया, पौषध, उपवास आदि करने में भी कहां धन की जरूरत है। धर्म के सदाचरण में धन की आवश्यकता नहीं। स्थानकवासी जैन धर्म के लिए तो कहावत भी है– 'पैसो लगे न टको, ढूंढियों धर्म पक्को।' इस प्रकार धर्म का आचरण निर्धन एवं साधनहीन व्यक्ति भी कर सकते हैं।

दूसरा प्रश्न यह भी उपस्थित होता है कि क्या कोई व्यक्ति ऐसा भी हो सकता है जो धार्मिक भी हो और अपने पास विद्यमान धन से किंचित् भी आसक्ति कम न करता हो? धर्म तो आसक्ति को तोड़ता है। इसलिए जिसे जो सामग्री या धन आवश्यकता से अधिक प्राप्त है, धार्मिक व्यक्ति उसमें से कुछ अंश धर्म– प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करने में लगायेगा ही, क्योंकि धर्म ही शरणभूत है। शान्ति, सुरक्षा एवं आत्म-उन्नयन का सच्चा साधन धर्म ही है। धर्म-प्रवृत्तियों के प्रोत्साहन में स्वाध्याय हेतु पुस्तकों का प्रकाशन, पुस्तकालयों एवं धर्मस्थानों का निर्माण आदि कार्य सम्मिलित हैं।

धन यदि धर्म का सहयोगी बन जाए तो वह व्यक्ति के लिए अशान्ति का कारण नहीं होता। परन्तु यदि धर्म भी धन के लक्ष्य से किया जाय तो वह भी अशान्ति का कारण बन जाता है। धर्म से आत्म-शुद्धि की उपलब्धि ही प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए, धन तो अनाज के साथ भूसे की तरह स्वतः प्राप्त होता रहता है।

धन का जीवन में मूल्य है, किन्तु धर्म उससे भी बढ़कर मूल्यवान है। धन जहाँ भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक है वहाँ धर्म से नैतिक व आध्यात्मिक उन्नयन तो होता ही है, भौतिक इच्छाओं पर संयम होने से जीवन सुखी व शान्त बनता है। उससे कदाचित् भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती हो, किन्तु धर्म को उसका लक्ष्य नहीं बनाना चाहिए। जहां तक हो, धर्म से दूसरों को भी जोड़कर उन्हें आत्मिक विकास एवं शान्ति का अनुभव कराने में सहायक बनना चाहिए तथा आसक्ति कम करते हुए अपनी प्राप्त सामग्री का उपयोग धर्म की अभिवृद्धि में करना चाहिए।

अमृत - वचन

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- चतुर कृषक जल को नाली में न डालकर बाड़ी में बहाता है। इसी प्रकार 18 पापों से संचित द्रव्य को आरम्भ–परिग्रह की नाली में मत बहाओ। उसका ज्ञानदान, अभयदान, शासनसेवा, स्वधर्मिसहाय-उपकरण-दान आदि में लगाने से द्रव्य का सदुपयोग हो सकता है।
- द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव की अनुकूलता में पुरुषार्थ किया जाय तो कार्य सिद्धि हो सकती है।
- आज के श्रावक व्यावहारिक जगत् में पैतृक सम्पदा की तरह गुरु से दी गई धर्म–सम्पदा को बढ़ाकर सच्चे सपूत बनें तो विश्व कल्याण हो सकता है।
- भला व्यक्ति भी नीच की संगति से कलंकित होता है।
- श्रावक धर्म की साधना के लिए निर्व्यसनी होना प्रथम आवश्यकता है।
- ममता के चक्कर में पड़ने वाला स्वयं अशान्त हो दूसरों को भी अशान्त करता है।
- व्यसन का अर्थ ही विपत्ति है। जिससे धनहानि हो एवं जीवन दुःखमय हो वैसी कोई कुटेव नहीं रखनी चाहिए।
- एक का दिल–दिमाग बिगड़े, उस समय दूसरा संतुलित मन को संभाल ले, तब भी बिगड़ा हाल सुधर जाता है।
- मनुष्य को पर–दुःखदर्शन के समय मक्खन सा कोमल रहना चाहिए और कर्त्तव्य पालन में वज्रवत् कठोर।
- गुणी ही गुण की कद्र करता है। गुणों से ही मनुष्य की पूजा होती है।
- भोग पर नियन्त्रण रखने वाला ही देश–धर्म की सेवा कर सकता है।
- ज्ञानपूर्वक मार्ग ग्रहण करने वाला कठोर परीक्षा में उलझन के समय भी संभल जाता है।
- आज जो लोग भाई–भाई के बीच एवं सम्प्रदायों के बीच दीवाल खड़ी करते हैं, वे सपूत नहीं हैं।
- स्वतंत्रता अमृत और स्वच्छन्दता विष है।
- जाति शरीर के अन्त तक है, परन्तु विचारों एवं संस्कारों में बदलाव होता रहता है।

श्रद्धा, समर्पण और समाधिमरण के आदर्श : सागरमल जी महाराज

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

श्रद्धा, समर्पण और सेवा यदि किसी साधक में हों तो उसका जीवन सफल बन जाता है। ऐसा साधक मन एवं इन्द्रियों को साधकर समाधिमरण को अंगीकार कर ले तो, कहना ही क्या! मुनि श्री सागरमल जी म.सा. ऐसी अनेक विशेषताओं से सम्पन्न थे। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने बालकेश्वर, मुम्बई में सागरमल जी म.सा. की पुण्यतिथि पर श्रावण कृष्णा 13 दिनांक 6 अगस्त को जो प्रवचन फरमाया था वह यहाँ प्रस्तुत है। प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन जी मेहता, जोधपुर ने किया है।—**सम्पादक**

संसार के सब दुःखों का अन्त करने वाले अविनाशी—अविकार सिद्ध भगवंतों को, ममता—मोह पर विजय प्राप्त करने वाले अनन्तज्ञानी, अनन्त दर्शनी अरिहंत भगवंतों को तथा साधना में चरण बढ़ाकर अंतिम मनोरथ को सिद्ध करने वाले संत भगवंतों के चरणों में कोटि कोटि वन्दन!

तीर्थंकर भगवान् की आदेय—अनमोल वाणी में जीवन की पुस्तक के दो पृष्ठ हैं। जन्म आदि पृष्ठ है, मरण अन्तिम। पहला पृष्ठ—जन्म का है और अंतिम पृष्ठ मरण का। ये पृष्ठ और पुस्तक उनकी लिखी जाती है जिनका जीवन सुरम्य होता है एवं जिन्होंने ज्ञान—दर्शन—चारित्र के गुणों से और क्षमा, दया, शांति आदि समाधि भावों से जीवन जीया है।

जीव ने न जाने कितने जन्म—मरण कर लिये। यह आया अर्थात् जन्म हुआ, वह गया अर्थात् मरण हुआ। इस आने—जाने में कितनी वेदना हुई, इसकी गणना नहीं। मोहग्रस्त अज्ञानी जीव मृत्यु को सामने आई देख त्रास खाता है, रोता है, गिड़गिड़ाता है, आंसू बहाता है, मिन्नतें मांगता है और बचने का हर संभव प्रयास करता है—किंतु जीवन का अंतिम समय आने पर किये गये सब प्रयास विफल हो जाते हैं और अंततोगत्वा मरण को प्राप्त होना ही पड़ता है। 'जो जन्मा है वह निश्चित रूप से मरेगा' यह ध्रुव सत्य है, यह प्रकृति का अटल नियम है। मृत्यु को सन्निकट देखकर व्यक्ति को आर्त्तध्यान होने का कारण उसकी अज्ञानता एवं मोहासक्ति है जिसके फलस्वरूप वह तन, धन, जन—परिजन आदि पर-पदार्थों को अपना माने हुए बैठा है, जो वस्तुतः उसके हैं ही नहीं।

जैन संस्कृति अध्यात्म-प्रधान संस्कृति है। यम, नियम, संयम की संस्कृति है, तप—त्याग—विराग की संस्कृति है। इस संस्कृति में जीवन और मृत्यु को समान महत्त्व प्राप्त है। जो व्यक्ति जीवन-मरण की कला में कुशल है, वही महान् है। जैन संस्कृति का उद्घोष है "जीने के ढंग से जीओ और मरने के ढंग से मरो"। जिसका जीवन और मरण पर नियन्त्रण होगा उसकी

यहां पर भी जय और आगे भी जय है। त्यागी एवं विरक्त ज्ञानी साधक मृत्यु के आने पर हर्ष विभोर होता है और आनन्द की मस्ती में झूमता है। उसका जीवन कर्त्तव्य के लिए है, वैसे ही कर्त्तव्य के लिए मरण भी। संयम के लिए जीवन है तो सेवा एवं साधना के अचल मंगल पथ पर चलते-चलते जीवन निःशेष करना मरण। उन्होंने ही महापुरुषों के रूप में स्थान बनाया है।

कुछ महापुरुष जन्म से होते हैं, कुछ गर्भ से, तो कुछ कर्म से महापुरुष हैं। अपनी विद्या शक्ति से, अपनी कर्त्तव्य शीलता से, अपनी सेवा और कर्म के प्रभाव से एवं विनय आदि गुणों से वे संसार के महापुरुषों में गिने जाते हैं। कुछ महापुरुष हैं, जो जीवन में महापुरुष की गणना में नहीं आये, पर मरण को महोत्सव बना कर समाधिपूर्वक स्वर्ग गमन करते हैं, उनका दर्जा भी महापुरुषों की गिनती में आता है।

ऐसे ही महापुरुष का दृष्टान्त देखना चाहें तो पूज्य श्री सागरमल जी म.सा. का जीवन देखने योग्य है। विनय और समर्पण के गुण वाले हमेशा दूसरों को ऊँचा बताया करते हैं, अहंकार वाले हमेशा अपनी अच्छाई और दूसरों की कमजोरी का कथन करते हैं।" आचार्य भगवन्त ने अपने श्रीमुख से कभी फरमाया कि मैं दीक्षा लेने के बाद उनके चरणों में बैठने लगा। पर उनका कथन होता- "मैं पापी जीव, आप आचार्य श्री (शोभाचन्द्र जी म.सा.) की चरण सेवा में बिराजो।" आप अत्यन्त मितभाषी एवं पूर्ण अनासक्त थे। हमारे अखिल् भारतीय संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष रह चुके उनके भाई लाभचन्द जी लोढ़ा ने कहा- "हम से कभी दस मिनिट भी बातचीत नहीं की।" हम जब उनके नजदीक जाकर बैठते तो कहते- मैं पापी जीव, तुम यदि जीवन बनाना चाहते हो तो आचार्य श्री के चरणों में बैठो। परिवार के सदस्यों को अपने पास नहीं बैठने देते। क्यों? तो वे जानते थे कि पास में बैठना मोह का कारण हो सकता है। अतः कहते-तुम्हें पास में ही बैठना है तो आचार्य श्री के पास बैठो, जिन्होंने मुझे तारा है, उबारा है।"

कितनी निस्पृहता थी! वे कैसे निर्मोही थे! उनका गुरु चरणों में कितना समर्पण था! विनीत के तीन लक्षण हैं। वे चेहरे के भाव समझने वाले थे। किसी काम से जाते-आते तो आवस्सहि-निस्सहि कहते। काम समापन किया और तुरन्त गुरु चरणों में आकर बिराज जाते। सागरमल जी महाराज, धर्मस्थान में हैं तो आचार्य भगवन्त के चरणों में बैठे मिलेंगे। यह एक तरह से उनकी पहिचान सी थी। कभी आहार के लिये या शारीरिक आवश्यकता के लिए चले जायें, यह तो अलग बात है, अन्यथा वे सदा गुरु-चरणों में ही बैठे मिलते। बात करने वालों से कहते "मुझ से न तप होता है, न स्वाध्याय" एक उपवास में उनके गले में कांटे पड़ जाते, पित्त हो जाता और दूसरा उपवास करने की स्थिति नहीं होती। उनका शारीरिक क्षयोपशम इतना कमजोर था।

तप शरीर की अनुकूलता से होता है। उनके शरीर की प्रकृति तप के अनुकूल नहीं थी। ज्ञान में भी क्षयोपशम मंद था। पांच गाथा पूरी याद नहीं कर सकते थे। आचार्य भगवन्त ने स्वयं फरमाया। उन्होंने संवत् 1972 से 1985 तक कभी व्याख्यान नहीं दिया। तप होता नहीं था। पर उनका समर्पण देखिये– उस समय स्वामी जी सुजानमल जी म., भोजराज जी म. सब बड़े–बड़े संत थे। उनके होते हुए भी आचार्य भगवन्त ने मुथा साहब से कहा– "संघ में जब भी कोई समस्या आये तो सागरमल जी म.सा. से पूछ लेना।" यह कब होता है? समर्पण, श्रद्धा और सेवाभाव का यह सुफल था। बोलने की कला सीख लेने के समान ही तप करके साधना में आगे बढ़ जाना भी एक कला है एवं ज्ञान भी एक कला है। किन्तु तपस्वी ज्ञानी शायद उतना हृदय में नहीं बैठता, जितना सेवा करने वाला बैठता है।

सागरमल जी म.सा. का जन्म किशनगढ़ नगर में पिताश्री फूलचन्द जी लोढ़ा, माताश्री पहप देवी जी जौहरी के घर में आषाढ़ शु.12 वि.स. 1944 की पावन वेला में हुआ एवं दीक्षा पौष शु.2 वि.सं. 1972 को 28 वर्ष की उम्र में आचार्य पू. श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. के श्री चरणों में जयपुर नगर में सम्पन्न हुई। उन्होंने जन्म और मरण के बीच श्रद्धा और समर्पण का जीवन बिताया।

छोटी से छोटी बात खड़े होकर पूछते– ऐसा उनमें विनय था। समय मिलने के साथ प्रतिपल गुरु चरणों में बैठकर स्वाध्याय करना एवं समय पर गुरु सेवा करना यही उनका लक्ष्य था।

गुण सागर के गा प्राणी, संथारे की दिल ठानी
लोढ़ा कुल का नंदन है, सौम्य शांतमन चंदन है।
रत्नों सम आत्म ज्ञानी।।
पल प्रमाद नहीं तन में, थी भक्ति गुरु चरणन में
सेवा में सब सुख मानी, संथारे...।।

सागरमल जी म.सा. का सबसे बड़ा गुण था 'काले कालं समाचरेत्' जिस समय जो काम करना उसे करते। प्रातः काल स्वाध्याय करना है तो स्वाध्याय करते। पिछली रात स्वाध्याय के बाद प्रतिक्रमण, सूर्योदय के समय प्रतिलेखन करते। सागरमल जी म.सा. को प्रतिलेखन करते देखकर लोग समझ जाते कि सूर्योदय हो गया है। वे अप्रमत्त साधक थे। वे बातचीत के बजाय परावर्तन रूप स्वाध्याय करते रहते। 'काले कालं समाचरेत्' उनके जीवन का मुख्य सूत्र था।

उनके जीवन का समर्पण और श्रद्धाभाव सुनकर पूर्व समय का पढ़ा हुआ एक संस्मरण याद आ रहा है। बलख के एक बादशाह थे हजरत इब्राहीम। मुस्लिम शासक होते हुए भी अपने बचे समय में वे खुदा की इबादत करते। वे छोटे से छोटे व्यक्ति की कदर करते और नेकी के काम को अंजाम देते। उस समय पशुओं की तरह मानव भी बेचे जाते। उन्हें दास

कहते। आज भी कई देशों में इंसान बेचे जाते हैं। भगवान् महावीर के समय बाजारों में जैसे कपड़ा बिकता है, इंसान भी बिकते थे। महासती चंदनबाला को रथिक ने बाजार में बेचने के लिए खड़ा कर दिया। हरिश्चन्द्र स्वयं बिक गये। एक फक्कड़ संत हजरत इब्राहीम के हाथ आ गया। वह हजरत के यहाँ, संत होकर दास की तरह काम करता। बादशाह ने उसकी कर्त्तव्य परायणता में किसी भी प्रकार की शिकवे शिकायत नहीं सुनी। नाम भी जानकारी में नहीं था। एक दिन पूछा– लोग तुम्हें क्या कह कर पुकारते हैं? जवाब था– हुजूर, मेरा अपना कोई नाम नहीं, आप जिस नाम से पुकारें, वही मेरा नाम है। बादशाह को उसकी बात में रस आया। फिर पूछा– तुम्हारी पसंद का भोजन क्या है? जवाब दिया–भूखे पेट में आपकी मेहरबानी से जो पड़ जाय वही सबसे सुन्दर है। आप जो देंगे, उसे मैं भगवान् का प्रसाद समझ कर ग्रहण करूंगा।

ऐसा कहना सरल है। कभी थाली पर बैठते हो तो क्या लेते हो? आप स्वयं जानते हैं। वस्त्र के लिए पूछा– तुम्हें कैसा वस्त्र पसंद है? हुजूर, जो आप देंगे, वह मेरे लिए सोने का तार है। फिर पूछा– तुम्हें कौनसा काम अच्छा लगता है? जवाब मिला–आप जिसमें जोड़ देंगे उसी काम को दिलचस्पी और रुचि से करूंगा। आगे पृच्छा चली– कहाँ रहोगे? जवाब था– दास आपके चरणों की छाया में रहना चाहेगा। बादशाह ने तेज बोलकर कहा–सब काम मेरे ऊपर छोड़ता है, क्या तेरी कोई इच्छा नहीं? दास ने हाथ जोड़ लिये और बोला–जहाँपनाह! खफा न हों। असली गुलाब वही है जो मालिक की इच्छानुसार चले। गुलाम की क्या इच्छा। आपकी आज्ञा पर चलूं, बस यही इच्छा है।

आप चिंतन करना। उसके जवाब सुनते–सुनते बादशाह के रोम–रोम खड़े हो गये। आंखों में प्रेम के आंसू छलछला उठे। वह सिंहासन से नीचे उतरा और उस फकीर को छाती से लगाकर बोले– दोस्त, आज तुमने मेरी आंखें खोल दी। गुलाब तुम नहीं, मैं हूँ। जिसने आपकी इच्छा कामना जीत ली, वह गुलाब रहा ही कहाँ? इच्छाओं का गुलाम तो मैं हूँ। आज से तुम मेरे गुरु, मेरे मालिक हो। आज के दास–विद्यार्थी और शिष्य भी ऐसे हों, बड़ी कठिनाई है।

समर्पित जीवन एवं निस्पृहता के स्वरूप का परिचायक यह एक और संस्मरण है। संवत् 2022 में भयंकर बमबारी के समय खाइयाँ खुद रही थी। जब, सभी लोग बत्तियाँ बुझाकर अपने प्रेमी जनों को साथ लेकर खाई में घुसने हेतु भाग रहे थे, वहाँ एक बुढ़िया अपने मकान में आराम से सोने की तैयारी में लगी थी। चौकीदार ने पूछा– माँ, क्या तुझे मरने का डर नहीं, जो सोने की तैयारी कर रही है– जागती क्यों नहीं रहती? बोली– मेरे

स्वामी(प्रभु) जाग रहे हैं, फिर मैं क्यों जागूँ? दोनों जाग कर क्या करेंगे? उसने कहा– बम गिर गया तो? जवाब मिला– 'बेटा, मारने वाले से बचाने वाला बहुत बड़ा है। फिर मर कर स्वामी के पास ही तो जाना है, तब डरना कैसा?

आप चिन्तन करें, समर्पण कैसा होना चाहिए। सागरमलजी महाराज का ऐसा ही समर्पण था। गुरु ने कह दिया उसे वे ब्रह्मवाक्य मानते। दोपहर एक बजे विहार क़ी बात कही और चल दिये, यह नहीं कहा कि यह कोई विहार का समय है। कोई तर्क नहीं।

सेवा के आदर्श का एक संस्मरण याद आ रहा है– प्राणिमित्र आनन्दराज जी सुराणा कान्फ्रेंस के मंत्री रह चुके। सागरमल जी म. के संथारा के समय सेवा कर रहे थे। वहाँ एक कुत्ता आया और गन्दगी कर गया। संघ के अध्यक्ष आये और बोले, हरिजन को बुलाओ और सफाई करवा दो। सुराणा जी बोले हरिजन आकर सफाई करेगा तो हम स्वयं सेवक यहाँ क्या करेंगे? उन्होंने कागज का ठप्पा लिया और आंगन धो कर साफ कर दिया। सेवा का वह कैसा आदर्श था। आज नौकरों के भरोसे काम चलता है।

मैं उनके जीवन की विशेषता कहने जा रहा हूँ। ऐसा समर्पित जीवन जीने वाले के प्रति चौपड़ा साहब कहा करते हैं– "संसार में वे धन्य हैं, जिनके हृदय में गुरु का वास होता है। पर वे धन्य–धन्य हैं जो चेले होकर गुरु के हृदय में बैठे हैं। दुनियां के सारे लोग गुरु की प्रशंसा करते हैं। मैं भी करता हूँ, आप भी करते हैं, पर ऐसे विरले होते हैं जिनकी प्रशंसा गुरु करे। सागरमल जी म. ऐसे ही शिष्य थे, जिनकी गुरु तारीफ करते। ग्यारह वर्ष की दीक्षा पर्याय के समय आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म. का जोधपुर में 1983 की श्रावण कृष्णा अमावस्या को संथारे के साथ स्वर्गवास हो गया। सोचा, गुरु चरणों में कछ चढ़ाना चाहिए।

मुझे यहाँ आचार्य श्री जयमल जी म.की बात याद आ रही है। जिन्होंने गुरु चरणों में भेंट स्वरूप 17 साल एकान्तर तप किया। गुरुदेव का आसोज शुक्ला 10 को स्वर्गवास हुआ। चिंतन चला, आज तक गुरुदेव मुझे जगाने वाले थे। मेरी सार–संभाल करने वाले थे, किसी काम में स्खलना हो जाती तो मुझे सावचेत करने वाले थे। अब गुरु का साया उठ गया और प्रतिज्ञा की कि "मैं अब सोकर नींद नहीं निकालूंगा।" पचास साल तक उन्होंने आड़ा आसन नहीं किया। उन्हें एक महीने का संथारा आया, संथारे में भी कभी लेट कर नींद नहीं निकाली। संथारे के समय 88 वर्ष की उम्र थी।

मुझे सागरमल जी महाराज की बात कहनी है। आज कई साधु हैं जो ताकत बढ़ाने के लिए दवा खाते हैं। विटामिन लेना या च्यवनप्राश खाना, साधु के लिए वर्जनीय है। साधु तो आहार भी शरीर चलाने के लिए करता है। समाधि भंग होने की स्थिति में दवा ली जाती है। गुरु चले गये, अब मुझे भी

दवा नहीं लेनी, ऐसा संकल्प कर लिया। शरीर अस्वस्थ है, दवा की जरूरत है, आहार भी कम पचता है। धीरे–धीरे ऐसी स्थिति आ गई कि आहार करने बैठते, पेट में फुलाव हो जाता, आफरा चढ़ जाता। भोजन पचता नहीं। उन्होंने सोचा पेट माँगता नहीं, तो इसे जबरदस्ती क्यों देना? अब मुझे संथारा कर लेना चाहिए।

सागरमल जी महाराज को संथारे की भावना आई। न जाने कैसे–कैसे महापुरुष हैं। भगवान की भाषा में जघन्य दो हजार करोड़ और उत्कृष्ट नौ हजार करोड़ साधु मिल सकते हैं, पर संथारा नहीं आता। अंतिम मनोरथ किसी–किसी का पूर्ण होता है। पास में लाभचन्द जी म. थे, लालचन्द जी म. थे, उन्होंने कहा कि संघ के प्रमुख सुजानमल जी म. नागौर विराजमान हैं। आचार्य श्री हस्तीमल जी म. रियां विराजमान हैं, उनसे अनुज्ञा प्राप्त हो जाय, वे पधार जायें– तब संथारे का निर्णय हो सकेगा। कहा– भाई घर में प्रवेश का मुहूर्त हो सकता है, पर काल का मुहूर्त नहीं होता। काल मुहूर्त देखकर नही आता। तुम कब पूछोगे और कब समाचार आयेंगे। जब तक समाचार आवें, उन्होंने तप चालू कर दिया।

आचार्य भगवन्त को समाचार पहुंचे। वे रियां से पीपाड़ पधारे। स्वामीजी भोजराज जी म.सा. ने वहीं के एक ज्योतिषी धूलचन्द जी सुराणा जो प्रज्ञाचक्षु होते हुए एक अच्छे ज्योतिषी, वैद्य, घड़ी साज, कवि एवं संतों को अध्ययन कराने वाले भी थे, से पूछा– सागरमल जी म. संथारा करना चाहते हैं, इस संदर्भ में आप क्या कहना चाहते हैं? धूलचन्द जी सुराणा ने नक्षत्र आदि देख कर कहा– कि जिस नक्षत्र में तप चालू किया है, उसमें संथारा लम्बा चलेगा। एक महीने पहले संथारा सीझने की स्थिति नहीं है। आप जल्दी पधारें, ऐसी आवश्यकता नहीं– आप तो धीरे–धीरे भी पधार सकते हैं। आचार्य भगवन्त और स्वामी जी महाराज आदि सन्त पच्चीस दिन में किशनगढ़ पहुंचे। मुनिश्रीजी का तप चल ही रहा था। अनुज्ञा मिली। संथारा करा दिया।

आषाढ़ का महीना उतरने को आ रहा था, प्रकृति ने साथ नहीं दिया इसलिए आषाढ़ के अंत तक वर्षा नहीं हुई। लोगों ने एक अफवाह फैला दी कि जैन संत को भूखा मार रहे हैं, इसलिए वर्षा नहीं आ रही। इन्द्रदेव रूठ गये हैं। अफवाह जल्दी फैलती है, पूरे क्षेत्र में बात फैल गई। इस अफवाह में जैनी भी सम्मिलित हो गये। गोपीचन्द जी अमरचन्द जी, छाजेड़ की हवेली के बाहर के चौक में सभाएं होती। लोग कहते महाराज को मारा जा रहा है, इनको संथारा तुड़वा देना चाहिए। बात दरबार तक पहुंची। दरबान ने वहाँ के दीवान को जो अंग्रेज था, नाम शायद पावलस्कर था उसे जानकारी करने के लिए भेजा। दीवान संतों के चरणों में उपस्थित हुआ। उसने सागरमल जी

म. से ही पूछा– आपको क्यों मारा जा रहा है? महाराज ने शान्त भाव से जवाब दिया– "मुझे कोई नहीं मार रहा है। यह शरीर मुझे छोड़ने को तैयार है, तो मैं ही इसे क्यों न छोड़ दूँ। मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ।" चालीस उपवास के चलते उनकी यह बात चली। "आपको कोई घर से घसीट कर निकालना चाहे और कहे दो घंटे के भीतर–भीतर घर खाली कर दो, नहीं तो घसीट कर, धक्के देकर बाहर निकाल दिया जायेगा– दीवान साहब, ऐसे में आप क्या करेंगे?" उत्तर था– "मैं खुद घर छोड़ दूंगा।"

बस यही बात है। छोड़ने में आनंद है, छूट जाने में दुःख। "आप ही बताइये, मेरा शरीर काम नहीं करता, वह मुझे छोड़ देना चाहता है। जब शरीर छोड़ना चाहता है, तो मैं खुद उसे क्यों नहीं छोड़ दूँ? मेरे को कोई नहीं मार रहा। मैंने अपनी इच्छा से यह किया है।"

आप क्या चाहते हैं? आपमें से कौन हैं जो घर छोड़कर इस आनन्द को लेना चाहते हैं? कोई तैयार हो तो आ जाओ। आप बोलने के लिए आनन्द कह देते हैं, वह भी संतों को राजी रखने के लिए। आगे हो कर कोई छोड़ना नहीं चाहते। घर वालों की सुनते जायेंगे, उनके ताने भी सहन करते रहेंगे। किन्तु यह बात किसी के गले नहीं उतरेगी। एक घर में गोचरी के लिए गया। वहाँ एक बहू पीटी जा रही थी। वह बोली "तुम मारो, चाहे जितना मारो, हाथ–पाँव तोड़ दो, मैं तो इस घर में ऊभी आई और आड़ी जाऊँला।" अरे बहिन तू ऊभी आई,ऊभी क्यों नहीं निकले? ऊभी निकलेगी तो जय–जयकार होगी।

दीवान साहब को बात समझ में आ गई। उन्होंने तपस्वी सन्त को हाथ जोड़े और दरबार की रिपोर्ट दी।

पूज्य सागरमुनि जी म. ने संथारा किया। संथारा किसी कामना या भय से नहीं किया जाता। प्रलोभन और भय से व्यक्ति मर सकता है, पर साधना के द्वारा शरीर को इस प्रकार तप से तपा नहीं सकता। मन की आग नहीं बुझा सकता। मन से आसक्ति की ज्वाला को बुझा देने का नाम ही संथारा है। जीवन के प्रति मोह और ममता का त्याग हंसी खेल नहीं है। मृत्यु का भय मनुष्य को खाता रहता है। मृत्यु शब्द ही उसे भयानक प्रतीत होता है। मृत्यु की विभीषिका पर विजय प्राप्त कर लेना ही संथारा है।

श्री सागरमुनि जी म. ने एक योद्धा की तरह मृत्यु को ललकारा। विनाशी, भौतिक जीवन से हटा कर अपने को अविनाशी आत्म–तत्त्व पर केन्द्रित किया। वे अपने आत्म केन्द्र पर आसन जमा कर बैठ गये। मृत्यु–भय उन्हें विचलित नहीं कर सके। मृत्यु को उन्होंने परास्त कर दिया। तप एवं ज्ञान की ज्योति जलती रही और वे उसमें कामना तथा वासना की आहुतियाँ देते गये। 59 दिन तक यह महायज्ञ निरन्तर चलता रहा। श्रावण कृष्णा 13

वि.सं. 1985 को यह महायज्ञ पूर्ण हुआ। संथारा सीझ गया। सीझने का अर्थ है पक जाना। साधना पक गई। सिद्धि की ओर बढ़ गई।

जैन परम्परा में साधना के द्वारा देह-त्याग को मरना नहीं कहा जाता। वस्तुतः वह मरण नहीं अमरण है। वह सीझना है, पकना है। मरण कटु होता है, पकना मधुर। यह तो प्रकाश से प्रकाश की ओर बढ़ना है। समाधि से समाधि की ओर तथा आनन्द से आनन्द की ओर यात्रा करना है। मरण में पराजय का भाव छिपा है। इसलिए साधक के देह-त्याग को 'निर्वाण' कहा जाता है- 'समाधिमरण' कहा जाता है, विजय-यात्रा कहा जाता है। यह यात्रा मरण से अमरण की यात्रा है, अमरता की यात्रा है। 'समाधि' का अर्थ होता है चित्त की एकाग्रता, मन की शान्त स्थिरवृत्ति एवं आकुलता-व्याकुलता का अभाव। और 'मरण' का अर्थ है देह का परित्याग अथवा विसर्जन।

'समाधि-मरण' करने वाले के तन का रोम-रोम, मन का कण-कण और जीवन का क्षण-क्षण बोल उठता है "भंते! मैं हिंसादि अठारह पापों को जो मोक्ष मार्ग में विघ्न रूप हैं, संसार वृद्धि और दुर्गति के कारण हैं, जन्म-मरण बढ़ाने वाले हैं, उन्हें तीन करण-तीन योग से छोड़ता हूँ।"

समाधिमरण की यह स्थिति विवश होकर संसार का परित्याग करना नहीं है, अपितु ज्ञान अवस्था में आंतरिक प्रसन्नता एवं स्वतंत्र इच्छापूर्वक जीवन का छोर निकट आया जानकर संसार की आसक्ति, शरीर की ममता, परिवार का मोह तथा सुख-भोग के जंजाल की जड़ को सदा-सर्वदा के लिए काट देना है।

जिनके एक उपवास में गले में कांटे पड़ जाते थे, 59 दिन संथारा किस शान से चला, उसका बहुत कुछ वर्णन किया जा चुका है। संथारा एवं समाधिमरण के स्वरूप का परिचय भी कराया जा चुका है। मुझे अभी यही कहना है कि गुरु चरणों में उनका कैसा समर्पण था और कैसे उस महापुरुष ने समाधि भाव से जीवन का स्वर्णिम पृष्ठ लिखा, जो आज भी हमें प्रेरणा दे रहा है।

आप हम भी जीवन को सुन्दर बनायें और समाधिमरण के साथ अपने जीवन का अन्तिम पृष्ठ लिखें, यही मंगल भावना है।

धर्म का मूल विनय

भंवरलाल मेहता

11. विनयवान सभी का प्रशंसनीय और पूजनीय बनता है।
12. विनयवान का सारा व्यवहार विवेकयुक्त होता है।
13. विनीत को सभी सम्पत्तियाँ मिलती हैं।
14. अविनीत को सर्वत्र विपत्तियां हाथ लगती हैं।
15. विनय से आत्मगुणों को प्राप्त करने की योग्यता प्राप्त होती है।
16. विनय से आत्मा में कोमलता और मैत्री भावना का प्रादुर्भाव होता है।
17. विनय से वाणी और व्यवहार में मिठास आती है।
18. विनय को तप के बारह भेदों में से एक तप माना है।

-पाली मारवाड़

श्रवण और आचरण : मुक्ति का वरण

महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा.

वीतराग वाणी मानव के अन्तर्मन के मल का प्रक्षालन करने वाली है, किन्तु इसके लिए आवश्यक (अवश्यकरणीय) है कि वीतराग वाणी का श्रद्धापूर्वक श्रवण कर उसका आचरण किया जाए। बिना आचरण के वीतराग वाणी का श्रवण भी निष्फल ही रह जाता है। महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. ने 22 सितम्बर 2001 को धुलिया में फरमाये अपने इस प्रवचन में इसी प्रकार के विचार प्रकट किए हैं। वे प्रसंग से आये बिन्दुओं पर भी श्रोताओं का ध्यान आकृष्ट करते हैं। प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन जी मेहता, जोधपुर ने किया है। –**सम्पादक**

बन्धुओं!

वीतराग वाणी तप–संयम रूपी वह संजीवनी है जो भव–रोगों का नाश करके घट में ज्ञान का प्रकाश करती है और मुक्ति में वास कराती है। बत्तीस आगमों में आवश्यक अंतिम होते हुए भी इसका अपना महत्त्व है। आवश्यक क्या? "अवश्यकरणीयं इति आवश्यकम्।" जो कार्य आवश्यक रूप से करना चाहिए, उसे आवश्यक कहा जाता है।

प्रतिक्रमण आवश्यक है। चाहे श्रावक हो या श्रमण, प्रत्येक साधक के लिए आगमकारों ने आलोचना प्रतिदिन करनी चाहिए, इसे आवश्यक बताया। दोनों समय प्रतिक्रमण करते समय यदि उत्कृष्ट रसायन आ जाय तो तीर्थंकर नाम कर्म गोत्र का बंध हो सकता है।

आप क्या कर रहे हैं? प्रायः अधिकतर लोग शरीर, दुकान, मकान और कपड़ों की सार–संभाल तो कर रहे हैं, परन्तु अन्तरात्मा में जिन दोषों का सेवन चल रहा है उसे संभालने या रोकने का काम नहीं चल रहा। इसीलिए साधना में जैसा निखार आना चाहिए, नहीं आता।

प्रतिदिन अवश्य करणीय आवश्यक सूत्र की प्रस्तावना में एक रूपक आया– एक महाराजा को असाध्य रोग हो गया। रोग क्यों होता है? क्यों असाता वेदनीय का उदय आता है? आगमकारों ने अपना चिन्तन दिया, वैद्यों ने अपनी बात कही। ठाणांग सूत्र में रोग के नौ कारण बताये, जिनमें ज्यादा खाना भी रोग का कारण बताया, तो ज्यादा बैठना, ज्यादा सोना भी रोग का कारण है। इन्द्रियों पर अंकुश नहीं होना भी रोग का कारण है तो अधिक भोग भोगना भी रोग का कारण है।

महाराजा को रोग हो गया। बड़े घर में रोग आने पर अनेक वैद्य–डॉक्टर– हकीम और जानकार लोग पहुंचते हैं और अपनी–अपनी दवा बताते हैं। व्यक्ति सोचता है दवा का ज्यादा सेवन करूंगा तो जल्दी लाभ होगा, परन्तु ज्यादा दवाओं से फायदा कम, नुकसान अधिक होने की संभावना रहती है। अनुभवियों ने कहा–

घणी दवा सुं बिगड़े तन, पर धन देखियां बिगड़े मन ।
घणा भोपा सुं उठे धाम, पुत्र कपूत तो उठे नाम।।

अनुभवियों का अभिमत है– अधिक दवा से रोग का शमन हो ही जायेगा, यह जरूरी नहीं। रोग निकन्दन के लिए कभी.कभी साधारण दवा भी कारगर बन जाती है। पर, आज लोगों की मानसिकता बन गई, एक डाक्टर से संतोष नहीं, वे तीन.तीन,चार.चार डॉक्टरों से परामर्श करेंगे। डॉक्टरों की दवा अलग, वैद्यों की अलग।

आज दवा के सेवन का प्रचलन ज्यादा बढ़ गया है। यही कारण है कि रोगों का शमन होने के बजाय रोगों एवं रोगियों की संख्या निरंतर बढ़ती ही जा रही है। दूसरी बात नीतिकारों ने कहीं 'परधन देखियां बिगड़े मन।' पड़ौसी के बंगला है, कार है, ए.सी. है। उसकी शान–शौकत देखकर और तो कुछ होगा या नहीं, पर मन जरूर बिगड़ेगा। वह अधिक से अधिक कमाने की लालसा से अन्याय–अनीति को भी गले लगाकर कार–बंगले के स्वप्न को साकार करना चाहेगा।

आज लोगों की शान–शौकत देखकर अन्य लोग भी उसे पाने की लालसा से नहीं करणीय काम भी करते देखे जाते हैं। उनके दुःखद परिणाम भी अनुभव में आते हैं। तीसरी बात– 'घणा भोपा सुं उठे धाम।' धाम पर एक भोपा हो तो काम चलता रहेगा। घणा भोपा हो तो उस धाम का महत्त्व ही नहीं रहता। कोई कुछ कहेगा तो कोई कुछ। धाम की प्रतिष्ठा–पैठ एक भोपा रहेगा तब तक बनी रह सकती है। चौथी बात है– 'पूत कपूत तो उठे नाम।' यदि पुत्र योग्य नहीं, कपूत है तो नाम बदनाम हो जायेगा।

महाराजा को रोग हुआ, अनेक औषधोपचार किए गए, क्योंकि मोटा लोगां यानी पैसावाला रा चोंचला भी मोटा हुवै। आपने सुना होगा बड़ा लोगों रा धमेड़ो ज्यादा मोटो होवे। जोधपुर दरबार एवं एक चारण किले की बुर्ज पर घूम रहे थे। चारण का शरीर विशेष पुष्ट था एवं दरबार के मुंह लगा हुआ था। दरबार कहने लगे– तुम्हारा भारी शरीर है एवं मेरा हल्का। यदि दोनों नीचे गिर जायं तो धमेड़ो ज्यादा किनो होवेला। चारण चतुराई से बोला– अन्नदाता, रहने दो। यदि आप और मैं दोनों गिरांला तो म्हारो धमेड़ो तो म्हारे घर तक पूगेला और आपरो नवकोटि मारवाड़ तक पूगेला। क्योंकि बड़े लोगों का बोलना, चलना, खाना–पीना, गिरना सब अलग तरह का होता है।

महाराजा का इलाज करने कई वैद्य आए। उपचार से रोग शान्त नहीं हुआ। दवा करते–करते भी मर्ज बढ़ता ही गया। देश भर से नामी वैद्यों को बुलाया गया। पहला वैद्य कहने लगा–मेरी दवा लेंगे तो शरीर का रोग समाप्त हो जायेगा और यदि रोग नहीं है तो दूसरा रोग हो जायेगा। यानी दवा का रि–एक्शन हो जायेगा। दूसरा वैद्य आया और कहने लगा–रोग होगा तो मेरी दवा से शान्त हो जायेगा और यदि रोग नहीं होगा तो दवा से

कोई फायदा होने वाला नहीं । तीसरा वैद्य बोला– मेरी दवा ऐसी है जिसके सेवन से शरीर में रोग होगा तो समाप्त हो जायेगा और रोग नहीं भी है तो मेरी दवा से भविष्य में रोग नहीं होगा और मेरी दवा ताकत भी देगी।

आप कौनसी दवा लेना चाहते हैं? आज तो दवा भी मनगमती अच्छी लगती है, बात भी सत्य की अपेक्षा मीठी अच्छी लगती है। एक डोकरी को सन्निपात हो गया। अनेक लोग बुढ़िया की साता पूछने आने लगे। हर व्यक्ति अपनी दवा बताकर चल देता। कोई कहता इनको मेथी दो। दूसरा बोला इनको आंवले खिलाओ। मां सा चुपचाप आने वालों का परामर्श सुन रही थी, पर कुछ बोलती नहीं । एक दिन एक बहन आयी एवं बोलने लगी–मां को सन्धिवात हो गया। उठना, बैठना बंद सा हो गया तो इनको गुड़ के हलवे में सूंठ मिला कर दो। सुनने के साथ बूढ़ी मां बोल उठी–सुनो तो सही, यह क्या कह रही है, इसकी दवा ही मेरे असर करने वाली है यानी दवा भी मनगमती अच्छी लागे और बात भी.....

आप बोलें या नहीं, तीसरी प्रकार की दवा ही पसन्द करेंगे। किन्तु यह दवा तो शरीर के रोगों का शमन करने वाली है, पर भव-रोगों को समाप्त करने एवं त्रिकाल लाभ देने वाली दवा कौनसी? आचार्य भगवन्तों ने बताया– हमें वीतराग भगवन्तों ने कर्म निर्जरा हेतु तप-संयम की अमोघ औषधि बताई है।

तप करने से जन्म.जन्मान्तर के कर्म क्षय हो सकते हैं। संयम से नये कर्मों का आगमन रुक जाता है, क्योंकि आगमकारों ने फरमाया–

चरित्तेण निगिण्हाइ तवेण परिसुज्झइ।।

अतः तप-संयम भवरोग का नाश करने वाली अचूक औषधि है। कई दिनों से भवरोगों का नाश करने वाली आगम वाणी से ज्ञाताधर्म सूत्र का अधिकार चल रहा है। राजगृही में श्रमण भगवान महावीर स्वामी का पधारना हुआ। राजा श्रेणिक का पुत्र मेघ प्रभु के दर्शन–वंदन की भावना से पहुंचा। भगवान की सेवा में कई आते हैं। सेवा में आना और बात है,श्रवण और। सुनना कैसे? गुरुदेव आगमवाणी के साथ फरमाते हैं–वक्ता में सोलह गुण होने चाहिए। यदि गुण नहीं होंगे तो सभा में रंग जमने के बजाय सभा की क्या हालत होगी, आप स्वयं विज्ञ हैं। नीति की उक्ति है–

बाग बिगाड़े बान्दरा, सभा बिगाड़े क्रूर।
वेश बिगाड़े लोलुपी, ज्यूं केसर में धूर।।

केशर धूल में डालने के लिए नहीं है। बगीचा सुन्दर है। अशोक वाटिका या नन्दन वन की तरह है, लेकिन बन्दर सुन्दर उपवन नहीं देखते, वे तो इधर–उधर फुदकते डाली हाथ लगी, डाली तोड़ेंगे, फल हाथ लगे, फल तोड़ेंगे। पत्ते, फूल सुरक्षित नहीं रहेंगे। इसीलिए कहा गया– बाग बिगाड़े बान्दरा। सभा बिगाड़े क्रूर। क्रूर बात–बात में विवाद पैदा कर देगा। बन्दर

बगीचे का नाश करता है, क्रूर सभा का नाश करता है। वैसे ही सभा के बीच बोलना कठिन होता है। कई लोग बोलने के लिए खड़े तो हो जाते हैं, पर उनके हाथ कांपते हैं, पांव हिलते हैं, क्यों? इसलिए कि बोलना सरल नहीं। बोलना सरल नहीं तो सुनना–श्रोता बनना भी सरल नहीं है। सुनने की कला नहीं हो, तो अच्छी तरह सुन भी नहीं सकते।

श्रोता में चौदह गुण होने चाहिए। श्रद्धापूर्वक सुनना उसका प्रथम गुण है एवं श्रावक के लिए भी कहा जाता है–श्रद्धा पूर्वक सुनकर विवेकपूर्वक क्रिया करने वाला श्रावक होता है। यदि श्रद्धा नहीं तो फिर आस्था के साथ सुना नहीं जायेगा और यदि श्रद्धा का भाव है तो साधारण से साधारण बात भी असरकारी बन जायेगी। अन्यथा चाहे जितना विद्वत्तापूर्ण कथन भी क्यों न हो, उसका भी असर होने वाला नहीं है।

कई व्यक्ति हैं जो पहली बार गुरु वाणी को सुनने पर जग जाते हैं। एक बार सुना और वैराग्य हो गया। शास्त्रकार कहते हैं– गुरु ही हमारी नांव के खिवैया हैं। उनकी वाणी ही जागृति कराने वाली है। इसलिए कहा गया–

आटन विष की बेलड़ी, गुरु गारुड़ी जान।
शीश दिया भी गुरु मिले तो भी सस्ता जान।।

शीश देने से गुरु मिले तो भी सस्ता जानो। आप भाग्यशाली हैं जिन्हें ऐसे आचार्य भगवन्त जैसे गुरु भगवंतों की वाणी सुनने का मौका मिला है। आप गुरु को गुरु तो मानते हैं, गुरु की वाणी पर जितना ध्यान देना चाहिए, नहीं देते।

शास्त्रकार कहते हैं– गुरु बनाने में आप स्वतंत्र हैं, पर आज्ञा पालन करने में स्वतंत्र नहीं हैं। गुरु–आज्ञा प्राणप्रण से पालन की जानी चाहिये। आज्ञा की आराधना हमारा कर्त्तव्य है। महाराज के यहां सभी तरह के श्रोता आते हैं। कोई सुनने वाला है, कोई धारण करने वाला है तो कोई मेला देखने वाला भी है। कई महाराज की परीक्षा के लिए आते हैं।

श्रोता की विविध रुचि के कारण ठाणांग सूत्र में चार प्रकार के श्रोता बताये गये हैं। श्रेष्ठ और आदर्श श्रोता वह है जिसके लिए दर्पण की उपमा दी गई है। दर्पण से आप परिचित हैं, रोज दर्पण में मुंह देखते हैं। कई भाई–बहिन तो कंघा–काँच साथ रखते हैं। उपाश्रय में भी आयेंगे तो युवकों की जेब में कंघा–काँच मिल सकता है, बहिनों के पर्स में भी ये मिल जाते हैं। हमारे उपाध्याय श्री तो फरमाते हैं, उपासरे में कांगसिया–काँच रो काई काम? पर आज स्थिति बड़ी विचित्र है। उपाश्रय में भी नहीं रखने योग्य साधन प्राप्त हो जायेंगे।

दर्पण क्या करता है? सामने जैसा प्रतिबिम्ब आयेगा वैसा बता देगा। आपने कभी फोटो खिंचवाई होगी। आपकी जैसी आकृति होगी वैसी उसमें आयेगी। संत न दर्पण देखते हैं, न फोटू खिंचवाते हैं। हम फोटू खिंचवाते

नहीं, फिर भी कोई चोरी–छुपे फोटो खींच लेता है। हम जड़ पूजा का निषेध करते हैं और चेतन की साधना में रत रहते हैं। आज संतों के फोटुओं का प्रचलन बढ़ रहा है। गले के लॉकेट में फोटू, पेन में फोटू, घर–घर में फोटू। फोटुओं की ऐसी हालत हो गई है कि कई फोटू तो सड़कों पर और नालियों तक में आ जाते हैं। यह स्थानकवासी परम्परा के विरुद्ध है। न संत फोटू खिंचवाता है, न ही आपको खींचना चाहिए। एक्स–रे मशीन में अन्दर की हड्डियों में कहां चोट है, कहां से टूटी हुई है वह आयेगी। सी.टी. स्केन में अन्दर कहां–क्या गड़बड़ है, ज्ञात होगा। एक–एक यंत्र की बात आप जानते हैं। मुझे यंत्र की नहीं, श्रोता की बात कहनी है। अच्छा और सच्चा श्रोता वह है जो दर्पण के समान जैसा सुनता है वैसा आचरण में उतारता है। सुनकर जो आचरण में उतारता है उसे आनन्द मिलता है।

मेघकुमार भगवान के चरणों में पहुंचता है। वह पहले नम्बर का आदर्श श्रोता था। वाणी श्रवण कर कहने लगा– "भगवन्! मैं आपके श्रीचरणों में दीक्षित होना चाहता हूँ।" मेघकुमार एक बार में जाग गया। आपने अनेक संतों के प्रवचन सुने हैं। सुना बहुत है,आचरण में क्या आया, इस ओर चिन्तन करने की जरूरत है।

आप वीर वाणी का श्रवण कर मेघकुमार के समान सच्चे श्रोता बनेंगे तो दुर्लभ मानव जन्म को सार्थक कर सदा–सदा के लिए भव रोगों का शमन कर मुक्ति का वरण करेंगे।

गांधीजी और उपहार

श्री आनन्दनराज धीसुलाल तलेसरा

गांधीजी को एक बार लोगों ने विदाई में सोने–चांदी के आभूषण, मूल्यवान घड़ियाँ और हीरे की अंगूठी उपहार में दी। गांधीजी ने तय किया कि इन्हें बैंक में सुरक्षित रखवा देंगे। बा ने इस पर आपत्ति करते हुए कहा– आपने अपने परिवार के सारे आभूषण तो सार्वजनिक उपयोग में लगा दिए। अब ये उपहार हमारे परिवार के लिए हैं। ये आभूषण यहाँ के निवासियों ने श्रद्धा से हमें दिए हैं, इसलिए ये हमारे बेटों की शादियों में काम आएंगे। मैं चाहती हूँ कि मेरी बहुएं इन गहनों को पहनें। गांधीजी काफी देर से चुपचाप सुन रहे थे। अचानक बा को बीच में ही टोक कर बोले–बा! क्या तुम इतना भी नहीं चाहती कि यह हमारी जनसेवा के बदले मिले हुए उपहार हैं। अतः इनका उपयोग जनहित के अलावा और कहीं कैसे हो सकता है? इस पर बा ने तुरंत अपनी सहमति दे दी और गांधीजी ने उन उपहारों को बैंक में जमा करवा दिया, ताकि सेवा कार्य के लिए धन की जरूरत हो तो ये गहने काम आएं।

–ई2/13, जलनिधि हाउसिंग सोसायटी, गोरेगांव(प.), मुम्बई(महा.)

धर्ममार्ग में बाधक तीन आसक्तियाँ

आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरि जी

धर्ममार्ग में तीन आसक्तियाँ बाधक हैं– 1. वस्तु के प्रति तीव्र आसक्ति 2. विचार के प्रति तीव्र आसक्ति 3. अहं की तीव्र आसक्ति। इन तीनों बाधाओं से बचते हुए धर्म के स्वरूप को समझकर धर्ममार्ग में पुरुषार्थ करना चाहिए। प्रस्तुत लेख से इसी प्रकार की प्रभावी प्रेरणा प्राप्त होती है।–**सम्पादक**

वेत्सि स्वरूपफलसाधन – बाधनानि,
धर्मस्य, तं प्रभवसि स्ववशश्च कर्तुम्।
तस्मिन् यतस्व मतिमान्नधुनेत्यमुत्र,
किंचित्त्वया हि नहि सेत्स्यति भोत्स्यते वा।।

धर्म का स्वरूप, फल साधन और बाधाएं तू जानता है और तू स्वतंत्र होकर धर्म करने में समर्थ है। इसलिए तू इसी भव में यत्न कर। कारण कि आगामी भव में तेरे द्वारा कुछ सिद्ध नहीं हो सकेगा अथवा तू जान ही नहीं सकेगा।

मेरे को मालूम है–

दोपहर में कुम्भकर्णी निद्रा में सो रहे पिता के पास आकर बालक ने जोरदार आवाज लगाई–

'पप्पा! पप्पा! उठो'

'पर, क्या है?'

'नीचे माल लेने ग्राहक आया है।'

'मेरे को मालूम है'

'और वह 5 लाख का माल मांग रहा है'

'अरे 5 लाख नकद लेकर आया है'

'मेरे को मालूम है'

'बारह महीने की कमाई एक सौदे में हो जाये, ऐसी सुन्दर बात है।'

'मेरे को मालूम है'

'तो फिर उठ क्यों नहीं रहे?'

'कारण कि आज मैं ड्यूटी पर नहीं हूँ।'

✧✧✧✧✧✧✧✧✧✧

'उठो, घर में चोर घुस रहे हैं। 'पुलिस की पत्नी ने अपने सो रहे पुलिस पति के पास आकर जोरदार आवाज लगाई।'

'मेरे को मालूम है'

'पर उसने तो कपाट भी खोल लिया'

'मेरे को मालूम है'

'अरे! वह तो लेकर चले'

'मेरे को मालूम है।'

'तो फिर आप पकड़ते क्यों नहीं?'

'कारण कि आज मैं ड्यूटी पर नहीं हूँ।'

✧✧✧✧✧✧✧✧✧✧

सेठ और पुलिस, इन दोनों की मूर्खता पर हँसने से पहले ग्रंथकार श्री अपने को जो पूछ रहे हैं, उस पर अपने को गंभीरता से विचार करने की जरूरत है। पूछा है इन्होंने अपने को कि 'धर्म का स्वरूप क्या है, इसका तुझे खयाल है? धर्म का फल क्या है यह तू भलीभांति समझता है? इस धर्म की आराधना में बाधक ऐसे परिबल कौनसे हैं इसकी तेरे पास व्यवस्थित सूझ है? और, तू स्वयं इस धर्म की साधना करने के लिए अभी स्वतंत्र भी है, और समर्थ भी है, यह बात भी तेरे ध्यान में है?

यदि ध्यान में है तो फिर तू धर्म क्यों नहीं कर लेता? कारण कि यह भव पूर्ण होने के बाद आगामी भव में तू जहां भी जायेगा वहां धर्म की पूंजी साथ नहीं होने के कारण तू धर्म समझ भी नहीं सकेगा। तब उस धर्म के आचरण की बात तेरे लिए शक्य कैसे होगी? इसलिए हमारी तुझे खास सलाह है कि धर्म के लिए तुझे मिले हुए अनुकूल संयोगों का तू भरपूर लाभ उठाले।

प्रश्न अपने खुद के आत्मनिरीक्षण का है। समझ व्यवस्थित होते हुए और अनुकूल साधन उपलब्ध होते हुए हम साधना में कम क्यों उतर रहे हैं? कच्चे क्यों पड़ रहे हैं? पीछे क्यों हट रहे हैं? क्या कमी है हममें जो हमें धर्म नहीं करने दे रही? धर्म करते हुए समर्पित बनने नहीं देती? समर्पित बनते हुए सद्गुणी बनने नहीं देती? इन तमाम प्रश्नों के जवाब मिलाने के लिए तीन स्तर की विचारणा करना जरूरी है।

मुख्य बात तो यह है कि धर्म शुरू न करने देने में कोई मुख्य बाधक परिबल है तो वह है 'वस्तु के प्रति तीव्र आसक्ति।'

हमारे पास में जो भी पदार्थ हैं, उनके प्रति जो मन में आसक्ति तीव्र है वह आसक्ति धर्म शुरू करने नहीं देती। **संपत्ति की तीव्र आसक्तिवाला दानधर्म कैसे कर सकता है? चाय की तीव्र आसक्तिवाला उपवास कैसे शुरू कर सकता है? अपने पास में रहे हुए पेन पर जिसको तीव्र आसक्ति है वह जरूरतवाले को पेन कैसे दे सकता है? पत्नी पर तीव्र आसक्तिवाला एक दिन भी ब्रह्मचर्य का पालन कैसे पाल सकता है? शरीर पर तीव्र आसक्तिवाला कष्टदायक धर्म कैसे कर सकता है?**

तीव्र आसक्ति का जालिम खतरा कम नहीं है। यह इतनी खतरनाक है कि वस्तु को पकड़ कर रखने में स्पष्ट नुकसान जानते हुए और कदाचित् अनुभव करते हुए भी व्यक्ति को यह आसक्ति वस्तु को छोड़ने नहीं देती। दूसरी ओर वस्तु के त्याग से होने वाले धर्म की उत्तमता को जानते हुए भी वह धर्म की आराधना नहीं कर सकता।

संपत्ति का संग्रह और उसके प्रति रही तीव्र आसक्ति मेरी आत्मा की परलोक में हालत बिगाड़ देने वाली ही है, ऐसी स्पष्ट समझ होते हुए भी यह आत्मा संपत्ति का त्याग नहीं कर सकता, जिससे दूसरी ओर दान धर्म के सेवन से मेरा परलोक अचूक सुन्दर बन सकता है, ऐसा स्पष्ट ध्यान होने पर भी यह आत्मा दानधर्म की आराधना नहीं कर सकता।

अलबत्ता! यह तो तीव्र आसक्तिवालों की बात है, पर जिसकी आसक्ति तीव्रतर हो अथवा तीव्रतम हो वह आत्मा तो पदार्थ के संग्रह को ही जीवन का गौरव मानता है। उसके मन में तो यही बात है कि पदार्थ है तो जीवन का मजा है। पदार्थ नहीं है तो फिर इस जीवन में करने का है ही क्या? पदार्थ तो जिस किसी रीति से मिलें, जिसके भी पास से मिलें,बस,मिलाते रहो और इसके द्वारा जीवन का मजा लेते रहो। बाकी,मरने के पश्चात् की चिंता अभी करने की कोई जरूरत नहीं। जो सबका होगा वही अपना हो जायेगा।

ऐसी मान्यतावाले को तुम धर्ममार्ग में कैसे लगा सकते हो? कारण कि पदार्थ के प्रति तीव्रतम आसक्ति उसके अंतर में धर्मश्रद्धा पैदा होने ही नहीं देती। श्रद्धा ही नहीं, तो निष्ठापूर्वक सम्यक् आचरण की तो बात ही क्या? ऐसे जीव को तो शास्त्रकारों ने धर्म के लिये अयोग्य गिना है। कारण कि आसक्ति की तीव्रतमता उसे विषयदुष्ट और कषायदुष्ट बना कर ही रहती है। विषयदुष्टता और कषायदुष्टता जिसके अंतर में है वह वास्तविक धर्मश्रद्धा से विमुख ही होता है।

यहाँ प्रश्न ऐसे जीव का नहीं, पर अपना है। कारण कि ऐसी आसक्ति की तीव्रतमता के शिकार हम नहीं बनें। कदाचित् आसक्ति की ऐसी तीव्रता भी हमारे में नहीं है कि जो हमें धर्म शुरू ही न करने दे। नहीं, अनेक अवसरों पर आप दानमार्ग में संपत्ति का सद्व्यय करते हैं। शक्ति के अनुसार तपश्चर्या में झुक पड़ते है। सत्त्व फोड़कर व्रत– नियमों का स्वीकार और पालन, दोनों करते है। सुखशीलता की वृत्ति को दबाकर परमार्थ के कार्य करने बाहर निकल ही पड़ते हैं।

सार में, धर्म भले ओछे से ओछा, पर अपने जीवन में चालू तो हो ही गया है, इसमें कोई दो मत नहीं। तो फिर ऐसे कौनसे परिबल प्रतिबंधक बन रहें है कि आत्मा को धर्म के हार्द को स्पर्श करने नहीं दे रहे हैं?

जवाब इस प्रश्न का यह है कि जिस प्रकार वस्तु की तीव्र आसक्ति धर्म शुरू करने नहीं देती, वैसे ही विचारों की तीव्र आसक्ति हमें समर्पित बनने नहीं देती और हकीकत यह है कि **साधनामार्ग की सफलता पुरुषार्थ से जितनी बंधी है उससे अनेक गुणी तो समर्पितता से बंधी है।**

तुम्हें खयाल है? दूध में रेती का कण पड़े यह अलग बात है और शक्कर का दाना पड़े यह अलग बात है। शक्कर का दाना समय के बाद दूध में मिलकर अपने अस्तित्व को समाप्त कर डालता है। पर रेती का कण,

कदाचित् बरसों तक दूध में रहे, पर अपना अस्तित्व तो बनाए ही रखता है। विचार की तीव्र आसक्ति रेत के कण जैसी है। तिराने वाले अनुष्ठानों में आत्मा को यह जोड़ दे, पर उसमें मिलने तो हर्गिज नहीं देती। उपकारी के साथ आत्मा को यह रहने तो देती है, पर उसे समर्पित नहीं होने देती।

धर्म की बात सामान्य रूप से बिल्कुल ठीक है, पर हमें ऐसा लगता है कि आज के काल में यह व्यावहारिक नहीं। रात्रिभोजन के त्याग की बात, जिस काल में लाइट वगैरह नहीं थी उस काल के लिए बराबर थी, पर आज के काल में लाइट के माध्यम से रात है कि दिन इसकी भी खबर नहीं मिलती। प्रतिक्रमण तो सामान्य रूप से ठीक ही है पर हमारा अभिप्राय यह खरा है कि उसकी विधि थोड़ी छोटी रखते तो सार था। गुरुदेव ने ठपका दिया यह बराबर है, पर हमें ऐसा लगता है कि ठपके का शब्द सौम्य ही होना चाहिए। कठोर शब्द में दिया हुआ ठपका ऐसा धारदार असर करता नहीं है।

यह क्या?करने को तैयार, पर अपनी मान्यता तो बनाए रखनी। जमालि इसी में तो मात खा गया था। जीवनभर उसने संयम पाला और संयम पालते हुए अपने विचारों की तीव्र आसक्ति का शिकार बन गया तो परमात्मा महावीरदेव का शिष्य बन कर भी सर्वकर्ममुक्ति के लाभ से वंचित रह गया।

याद रखना,

धर्म शुरू कर देना कदाचित् सरल है, पर अपने विचारों को लेशमात्र भी वजन नहीं देना यह बहुत कठिन है, कारण कि इसमें अपनी बुद्धि को गौण बना देना पड़ता है। अपनी समझ को भंडार में पटक देना होता है और अपने अनुभव को भूल जाने की हिम्मत दिखानी पड़ती है।

प्रश्न तो इसमें यह है कि एक ही घर में रहते बाप–बेटे के बीच में ऐसा विचार–विरोध तो होता ही है न? बाप को ऐसा लगता है कि ताकत के लिए मिठाई उपयुक्त है और बेटे को लगता है कि नमकीन उपयुक्त है, तो इतने विचार-विरोध मात्र से बेटा बाप को समर्पित नहीं ऐसा थोड़े ही कह सकते हैं?

इसी प्रकार से,

धंधे में दो भागीदारों के बीच में विचार-विरोध तो होता ही है न? एक भागीदार का विचार होता है कि पूंजी ब्याज से व्यापारी को ही देना और दूसरे भागीदार का विचार होता है कि पूंजी ब्याज से बैंक में ही जमा करवाना। तो हम ऐसे विचार-विरोध से दो भागीदारों के बीच में मेल नहीं, ऐसा थोड़े ही कह सकते हैं?

तो इस प्रश्न का जवाब यह है कि **विचार–विरोध हितविरोध का कारण बनता हो तो यह विचार–विरोध तो बिल्कुल नहीं चल सकता।** बाप को मिठाई में ताकत दिखती हो और बेटे को नमकीन में ताकत दिखती हो यह

विचार-विरोध एकता में बाधक नहीं, पर बच्चे को मांसाहार में ही ताकत के दर्शन होने लगें तो? यह विचार-विरोध में 100 प्रतिशत बाधक कारण है, क्योंकि यह विचार–विरोध बेटे के हितविरोध को जन्म देने वाला बन रहा है।

इसी प्रकार से,

पूंजी ब्याज से व्यापारी को दे या बैंक में जमा करे, इस बाबत दोनों विचार–विरोध एकता में बाधक नहीं, पर एक भागीदार ऐसी जिद्द लेकर बैठे कि पूंजी ब्याज से गुंडे को देनी कारण कि इससे सबसे अधिक ब्याज प्राप्त होता है तो यह विचार–विरोध नहीं चल सकता, कारण कि यह विचार–विरोध धंधे के हितविरोध में कारण बन रहा है।

बस, इसी न्याय से समझ रखनी है धर्म-आराधना के क्षेत्र में। परमात्मा महावीर देव के सामने जमालि के विचार–विरोध की आखिरी परिणति किसमें? हित विरोध में।

गुरुदेव संभूति मुनिवर की विचारधारा से सिंह गुफावासी मुनि की अलग रही हुई विचारधारा की आखिरी परिणंति किसमें? सिंहगुफावासी मुनि के हितविरोध में।

बस, इसी कारण से विचार–विरोध जोखिम भरा है। विचार की तीव्र आसक्ति जोखिमभरी है। यह कदाचित् आराधना में भले प्रतिबंधक नहीं बनती, पर समर्पण भाव में प्रतिबंधक बनकर आराधना के सच्चे आनंद और सच्चे फल दोनों से वंचित रख देती है।

पर,

वस्तु की तीव्र आसक्ति से बचने के बाद, विचार की तीव्र आसक्ति से बचने के बाद, तीसरे नंबर की तीव्र आसक्ति से साधक को बचते रहना चाहिए और यह तीव्र आसक्ति का नाम है–**अहं की तीव्र आसक्ति।**

आराधना के फलस्वरूप जीवन में जो भी बाह्य शक्तियाँ प्रकट होती हैं, उनके प्रदर्शन की तीव्र इच्छा। यह अहं की आसक्ति आत्मा को सद्गुणी बनने नहीं देती।

तुम्हे खयाल है?

वृक्ष को दिया हुआ पानी जमीन में जाकर अदृश्य नहीं हुआ तो वृक्ष कच्चा रह जाता है। मकान की नींव में डाला हुआ पानी पूरा अंदर जाता नहीं तो मकान कच्चा रह जाता है। बस, इसी प्रकार से धर्माराधना ठेठ अंतःकरण तक पहुंचती नहीं तो धर्माराधना भी कच्ची रह जाती है।

चौरासी–चौरासी चौबीसी तक जिनका पुण्य नाम अनेक की जबान पर आवे ऐसा जिन्होंने कार्य किया है वे कामविजेता स्थूलिभद्रस्वामी एक बार थोड़ी सी मात खा गये तो उनके गुरुदेव श्री की तरफ से उन्हें मिलनेवाले श्रुत के अधिकार पर ब्रेक लग गया।

इतनी अधिक बातें यहां करने का प्रयोजन यह है कि ग्रंथकार श्री ने श्लोक में धर्म के स्वरूप की, फल की, साधन की और बाधक की यह चारों बातें की हैं।

धर्म की व्याख्या करते पूज्य आचार्य श्री हरिभद्रसूरि महाराज ने स्पष्ट लिखा है कि **'रागादिमलविगमेन पुष्टिशुद्धिमच्चित्तमेव धर्मः।'** अंतःकरण में राग-द्वेषादि मल नाश से या ह्रास से उत्पन्न हुयी चित्तशुद्धि ही धर्म का स्वरूप है।

इसलिए प्राप्त हुयी सद्‌गतियों की परंपरा और उसके बाद प्राप्त होने वाली परमगति है इसका फल।

सत्त्व फोड़कर सदनुष्ठानों का सर्वोत्तम पालन और विविध प्रकार के उत्पन्न प्रमादी स्थानों से आत्मा को बचा लेने में पराक्रम दिखाना ही है बाधक बनते स्थानों से छुटकारा।

खूब गंभीरता से हमें इन तमाम वास्तविकताओं को समझकर उनके सम्यक् अमल पर मन को तैयार करना ही पड़ेगा, कारण कि प्रमाद के कारण सेठ एक बार भले 5लाख का सौदा चूक गया,पर उन्हीं दिनों में फिर सावधान बनकर दूसरा 25 लाख का सौदा कर ले यह शक्यता उत्पन्न हो सकती है।

पुलिस ने गफलत में भले चोरों को गहनों की पोटली ले जाने दी, पर जागृति दिखाकर चोरी गई हुई पोटली फिर से प्राप्त करना शक्य है।

पर,

हम जो इस भव में आत्मगुणों की कमाई कर लेने के संबंध में गाफिल रहे, अत्यधिक मेहनत से अर्जित किए हुए आत्मगुणों की लूट चालू रहे, प्रमादस्थानों में प्रतिकार करने में गाफिल रहे तो अपनी हालत ऐसी बननेवाली है कि भवांतर में कोई पूंजी हमारे पास रहने वाली नहीं। पूंजी ही नहीं रहेगी तो फिर उसके बढ़ाते रहने की तो बात ही कैसे होगी? उस पूंजी को टिका कर रखने की सावधानी बताने का प्रश्न ही कैसे पैदा होगा?

ना, यह भूल हमें करनी ही नहीं है। इस भूल को करना हमें सह्य ही नहीं। कारण कि एवरेस्ट पर चढ़ते–चढ़ते एक ही पैर गलत हुआ तो मौत हो सकती है, पर उत्तम कोटि के इस जीवन में धर्मसाधना के लिए मिले हुए श्रेष्ठ अवसर की अवगणना की सजा तो दुर्गति ही होती है। भले अनंतकाल तक परिभ्रमण करके आए हैं इन दुर्गतियों में, पर अब इनसे मुलाकात एक बार भी नहीं करनी है और इसलिए धर्मसाधना में पूरे सामर्थ्य बिना नहीं रहना है।

और अन्तिम बात,

धर्मसाधना की अपनी भूमिका को नजर में रखकर शुरूआत में हम इन्द्रियों को रूपांतरण मार्ग पर ले जाएं। गलत में से सम्यक् में,अशुभ से शुभ में और फिर यही रूपांतरण हमें निश्चित विजय दिलाकर ही रहेगा।

इससे अधिक अपने को दूसरा कुछ देखने का है?

–प्रेषक नेहा चोरड़िया, जामनेर

जैन साधना में सामायिक

प्रवर्तक कुन्दनऋषि जी म.सा.

सामायिक जैन साधना-पद्धति की रीढ़ की हड्डी है, केन्द्र बिन्दु है। सत्यम् शिवं सुन्दरम् का राजमार्ग है। आत्मा से परमात्मा तक पहुंचाने वाला सेतु है। आत्मा को विभाव से स्वभाव में लाने वाला साधन है। सामायिक का सरल अर्थ है समता। यदि सामायिक में भी ममता बनी रही, समता आई ही नहीं तो वह सामायिक नहीं है। वास्तविक सामायिक तभी होती है जब साधक समता के रस में ओत–प्रोत हो जाता है। पूर्वाचार्यों ने सामायिक की व्याख्या करते हुए कहा है 'समानि ज्ञानदर्शनचारित्राणि तेषु अयनं, गमनं–समायः स एव सामायिकम्' मोक्षमार्ग के साधन–ज्ञान, दर्शन, चारित्र सम कहलाते हैं। उनमें अयन अर्थात् प्रवृत्ति करना सामायिक है। वह दो प्रकार की है–इत्वरिक और जीवन पर्यन्त। श्रावक की सामायिक सीमित समय की होती है। साधु की जीवन पर्यन्त की।

अनुयोगद्वार सूत्र में सामायिक के अधिकारी के संबंध में कहा है– **जस्स समाणिओ अप्पा संजमे नियमे तवे, तस्स सामाइयं होइ इइ केवलिभासियं। जो समो सव्वभूएसु तसेसु थावरे सु य, तस्स सामाइयं होई।** जिसकी आत्मा तप-संयम नियम से भावित है, उसकी सामायिक होती है। जो त्रस-स्थावर सभी प्राणियों के प्रति समभाव रखता है उसकी सामायिक होती है। इन दो गाथाओं से स्पष्ट हो गया कि एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक सभी जीवों के प्रति समभाव रखना, तप, संयम एवं नियम में आत्मा को भावित करना सामायिक है। वह मन, वचन एवं काया से होती है। मन को संकल्प विकल्प से मुक्त करना, वचन को दुर्वचन से बचाये रखना, सावद्य वाणी से मुक्त होना एवं काया को पाप युक्त कार्यों से बचाए रखना, तनाव से मुक्त रहना चंचलता को दूर करना यह सामायिक का प्रमुख उद्देश्य है। सामायिक में काया की स्थिरता प्रथम शर्त है। 'तस्स उत्तरी' के पाठ में ठाणेणं, मोणेणं झाणेणं, इन तीन शब्दों में काया की स्थिरता को प्राधान्य दिया है। फिर मौन और अन्त में ध्यान की बात आई है। सामायिक के 32 दोषों में काया के 12 दोषों का विवेचन किया गया है। काया की स्थिरता हुए बिना सामायिक में मानसिक संकल्प–विकल्पों का जाल समाप्त नहीं हो सकता। शारीरिक स्थिरता में ही कायोत्सर्ग की सिद्धि निहित है और शारीरिक स्थिरता से ही मानसिक तनाव से मुक्ति मिल सकती है। इसलिए सामायिक को तनाव मुक्ति का भी साधन माना है। चार शिक्षाव्रतों में प्रथम सामायिक व्रत है। उपासना के क्षेत्र में यह सबसे बड़ा व्रत है। विषम परिस्थितियों में एक रूप रहना बड़ा कठिन है। उनमें सब कुछ सहना पड़ता है। यह सबसे बड़ी

साधना है। मनुष्य दो प्रकार की प्रवृत्तियां करता है– सावद्य और निरवद्य। सामायिक के साधना-काल में सावद्य योग का प्रत्याख्यान होता है। सावद्य योग का प्रत्याख्यान ही समता है। पापमयी प्रवृत्तियां निषेधात्मक भाव हैं। वे सावद्य योग के अन्तर्गत हैं। जैन जगत में पाप-प्रवृत्तियों को मुख्यतः 18 प्रकार से गिना है– प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, मायामृषावाद, मिथ्यादर्शन शल्य। विधेयात्मक भाव सामायिक की फलश्रुति है। जैसे प्राणातिपात-हिंसा को अहिंसा में बदलकर, मृषावाद को सत्य में, क्रोध को क्षमा में बदल कर सामायिक की जाती है। कलह आदि का उन्मूलन कर सौहार्द या मैत्रीभाव लाना, मन के बुरे संकल्प को बदल देना, यही सामायिक है। सामायिक कितने समय की होती है? जितने समय तक व्यक्ति समता में रह सकता है। उतने ही काल की सामायिक हो सकती है। किन्तु श्रावक के बारह व्रतों के अन्तर्गत जिस सामायिक व्रत की चर्चा उपलब्ध होती है उसकी अवधि दो घड़ी, एक मुहूर्त अर्थात् 48 मिनिट की है। सामायिक साधु जीवन की साधना का आदि बिन्दु है। मुखवस्त्रिका बांधकर दो घड़ी बैठ जाना ही सामायिक नहीं है। यह बाह्य सामायिक है, द्रव्य सामायिक है। भगवती सूत्र के शतक 7 के प्रथम उद्देशक में कहा गया है कि सामायिक में श्रावक को छः काया के जीवों का संरक्षण करना है। छः काय के जीवों की हिंसा से मुक्त होना है, सावद्य व्यापार का त्याग करना है। गृहस्थ तीन भंगों से सावद्य व्यापार से मुक्त नहीं हो सकता है, उसकी तीन करण तीन योग से सामायिक नहीं हो सकती है। निरन्तर सामायिक का अभ्यास किया जाय तो मन, वचन व काय योग को संतुलित किया जा सकता है। इससे उसे पूर्ण आध्यात्मिक ऊर्जा प्राप्त हो सकती है। दिन भर के लिए स्फूर्ति की अनुभूति भी हो सकती है। यह उसके लिए आत्मा को बल देने वाला टॉनिक है।

सामायिक द्रव्य और भाव दो प्रकार की है, द्रव्य सामायिक का अभिप्राय ऊपरी विधि विधान, वेश व उपकरणों के प्रयोग से है। भाव सामायिक का अर्थ हृदय के भावों से और विचारों से है।

राग–द्वेष, मद–मत्सर, क्रोधादि कषाय के परिणामों से मुक्त होने पर भाव सामायिक होती है अर्थात् पौद्गलिक पदार्थ को यथार्थ रूप से समझकर उससे अनासक्त हो जाना, आत्मभाव में रमण करना भाव सामायिक है।

पूणिया श्रावक की एक सामायिक राजा श्रेणिक को नरक के बंधनों से मुक्ति देने में समर्थ थी, अतः भगवान महावीर ने नरक से मुक्त होने के लिए चार उपायों में एक उपाय यह भी बताया था कि पूणिया की एक सामायिक भी नरक से बचा सकेगी। श्रेणिक ने सोचा कितना भी मूल्य चुकाना पड़ा, तो चलेगा। अभी तुरन्त क्रय कर लेता हूँ। धर्मसभा से निकल

कर सीधा पूणिया के घर पहुंचता है। उसका मूल्य पूछता है। पूणिया कहता है आत तक मैंने सामायिक नहीं बेची है। मैं भी उसके मूल्य को नहीं जानता हूँ। जिसने आपको सामायिक लेने की सलाह दी है, उसे ही मूल्य पूछ लो। राजा श्रेणिक भगवान से पूछते हैं कि पूणिया सामायिक दे रहा है, किन्तु उसका कितना मूल्य देना है? भगवान कहते हैं तुम्हारा इतना बड़ा विशाल राज्य है, ऐसे अनेक राज्य भी दिये गये तो भी सामायिक का मूल्य पूर्ण नहीं हो सकता है, क्योंकि सामायिक आध्यात्मिक वस्तु है और राज्य भौतिक पदार्थ। आध्यात्मिकता की तुलना भौतिकता के साथ हो नहीं सकती। करोड़ों जन्मों तक कठोर बाल तप करने वाला जीव जितने कर्मों का क्षय नहीं कर सकता, सामायिक करने वाला उतने कर्मों का क्षय कुछ ही क्षणों में कर देता है।

अठारह पापस्थान सावद्य प्रवृत्तियाँ हैं। इनको पुण्य एवं निर्जरा में बदलने के लिए अठारह ही निरवद्य प्रवृत्तियाँ है, जैसे प्राणातिपात यह जीव हिंसा का प्रतिपक्षी दया, करुणा, अनुकम्पा, अभयदान, मैत्रीभाव है। इनका जैसे–जैसे विकास होगा वैसे–वैसे कर्मों की निर्जरा या पुण्य होगा। हिंसा स्वतः कम होगी। यह स्वभाव में परिवर्तन का अमोघ उपाय है। यदि अपने आपको बदलने की तीव्र इच्छा है तो प्रतिपक्ष को उभारो। व्यक्ति साधना करते–करते अपने दृष्ट भावों को बदल सकता है। प्रतिदिन सात व्यक्तियों की हिंसा करने वाला अर्जुनमाली, चिलातिपुत्र आदि अनेक हिंसक व्यक्तियों ने हिंसा के प्रतिपक्ष भावों को बदल दिया था। विषमता समाप्त कर दी थी। समता के भावों को उभारा था।

सामायिक की निष्पत्ति है हर स्थिति में संतुलित रहना। आज व्यक्ति का जीवन भौतिकवाद की ओर बढ़ रहा है। वस्तुओं के प्रति आसक्ति बढ़ रही है। उसने समता को गौण कर दिया है। सामायिक से ही उसकी आध्यात्मिक यात्रा प्रारम्भ होती है। भगवान ने कहा है कि समता की साधना किए बिना व्यक्ति आत्मा के निकट नहीं पहुंच सकता है। इसलिए समता के लिए उन्होंने एक साधना दी है–

"लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा
समो निन्दापसंसासु तहा माणावमाणओ।

लाभ–हानि सुख–दुःख जीवन-मृत्यु, निन्दा-प्रशंसा और मान-अपमान के समय समभाव में रहो। उपर्युक्त सूत्र को अपने जीवन में क्रियान्वित कर व्यक्ति शान्ति और आनन्द की अनुभूति कर सकता है।

भारत का विधान तो हर भारतीय को राष्ट्रपति बनने तक का ही अधिकार प्रदान करता है, परन्तु शास्त्र का विधान नर को नारायण और जन को जगपति बनने का अधिकार प्रदान करता है। आवश्यकता है साधना से आगे बढ़ने की। **–आचार्य श्री हस्ती**

सेवा का महत्त्व

श्री कन्हैयालाल लोढ़ा

सेवक के हृदय में पवित्रता या धर्म का निवास होता है, क्योंकि उसमें स्वार्थभाव का अभाव हो जाता है। उसकी प्रसन्नता परिस्थिति या संसार पर निर्भर नहीं करती, उसकी प्रसन्नता तो अपने में से फूटती है। अतः सेवक के हृदय से भोगों के सुखों की आसक्ति स्वतः निवृत्त होती जाती है। अर्थात् सेवक और योगी समान हो जाते हैं।

भोगी जिस यश और कीर्ति के पीछे दौड़ता है, वह यश और कीर्ति सेवक के पीछे दौड़ती है, परन्तु वह उसे पकड़ व जकड़ नहीं पाती। सेवा (वैयावृत्य) तप है। तप अग्नि के समान है। जिस प्रकार जैसे–जैसे अग्नि प्रज्वलित होती जाती है वैसे–वैसे लकड़ी अग्नि से भस्मीभूत होती जाती है, इसी प्रकार सेवा रूपी वैयावृत्य तप जैसे–जैसे प्रबल होता जाता है, वैसे–वैसे भोग, वासना, विषय, कषाय रूप विकार जलकर भस्म हो जाते हैं। जब सेवक अपना सर्वस्व संसार को समर्पण कर देता है–संसार को दान कर देता है, अपने सुख के लिए कुछ भी बचा कर नहीं कर रखता है, तब वह वीतराग हो जाता है, क्योंकि वीतराग वही होता है जो अनंत दानी है, जिसके दान में अंश मात्र भी कमी है वह वीतराग नहीं हो सकता। जो इन्द्रिय, मन, तन, धन आदि सब कुछ संसार को समर्पण कर देता है वही वीतरागी होता है। जो दानी होता है,वही श्रेष्ठ होता है–सेठ होता है,ऐश्वर्य सम्पन्न होता है,महान् होता है।

सेवक में सेवा करने से कभी शक्तिहीनता नहीं आती है, प्रत्युत ज्यों–ज्यों सेवाभाव सबल होता जाता है त्यों–त्यों सेवक की शक्ति, सामर्थ्य, वीर्य बढ़ता जाता है अर्थात् त्याग में वृद्धि होती जाती है।

सेवक में स्वार्थभाव रूप अपने सुख की कामना गलती जाती है। कामना न रहने से कमी का अनुभव नहीं होता है। कमी ही दरिद्रता की द्योतक है। कमी न रहना ही संपन्नता–ऐश्वर्य का सूचक है।

जैसे–जैसे विषय–सुख मिटता जाता है वैसे–वैसे निज रस की अभिवृद्धि होती जाती है। यह निज रस का सुख ही सच्चा सुख है। यही भोगान्तराय कर्म का क्षयोपशम व क्षय है।

सेवा में महत्त्व अपने स्वार्थ भाव और विषय–सुख दोनों के त्याग का है। स्वार्थभाव के त्याग से प्राप्त वस्तु, बल व योग्यता का सदुपयोग स्वतः दूसरों के हित के लिए होने लगता है, यही सेवा है। सेवक का हित त्याग में ही है। सेवा में महत्त्व त्याग का है, वस्तुओं का नहीं। वस्तुएं संसार का अभिन्न अंग हैं, अतः वस्तुओं का संग्रह करना विश्व का ऋणी होना है। वस्तुओं को विश्व के समर्पण कर देना, वस्तुओं से सेवा करना, विश्व के ऋण से मुक्त

होना है। विश्व के ऋण से मुक्त होने पर विश्व (पुद्गल) से संबंध–विच्छेद हो जाता है, जिससे स्वतः अविनाशी (परमात्मा) से संबंध जुड़ जाता है। फिर सेवक और परमात्मा का भेद व भिन्नता मिट जाती है। आशय यह है कि सेवा से त्याग का बल आता है, जिससे मुक्ति की ओर प्रगति होती है। सेवक संसार से कुछ पाने की अपेक्षा नहीं रखता, जिससे सेवक को संसार का चिंतन नहीं आता, संसार ही सेवक का चिंतन करता है। सेवक संगठन के पीछे नहीं दौड़ता है, प्रत्युत संगठन सेवक के पीछे दौड़ता है। सेवक के हृदय में दीनता और अभिमान दोनों नहीं रहते। सेवा का मूल्य वस्तुएँ कम अधिक दान देने, सेवा की क्रिया कम अधिक करने पर निर्भर नहीं है, प्रत्युत करुणा भाव, माधुर्य (प्रेम) एवं त्याग रूप भावात्मक सेवा ही मूल्यवान सेवा है।

–82/141, मानसरोवर, जयपुर

नवकार मंत्र पर अटूट श्रद्धा

श्री माणकचन्द करनावट

मेरी पुत्री इन्दु बोहरा धर्मपत्नी श्री अरविन्द कुमार जी बोहरा पुत्रवधू श्री मांगीलाल जी बोहरा, जोधपुर अपने घर में प्रातः करीब 10–11 बजे गृहकार्य में व्यस्त थी। उसने कूलर की सफाई के लिये जैसे ही दोनों हाथ लगाये, उसे करंट लगा। देखते–देखते दोनों हाथ चिपक गये। अथक प्रयास के बाद भी हाथ नहीं हटे, भयंकर वेदना से वह रोने लगी, जोर–जोर से चिल्लाने लगी, संयोगवश घर पर भी ओर कोई नहीं था, वह अकेली थी अब क्या करे। रोते–रोते ही तुरन्त नवकार महामंत्र का ख्याल आया और मन ही मन नवकार महामन्त्र का जाप करने लगी। अचानक चमत्कार हुआ और दोनों हाथ जो करंट से कूलर पर चिपके हुए थे, तुरन्त छूट गये। इतने में घर का नौकर भी बाहर से आ गया तथा परिवार वाले भी ऑफिस से आ गये, तुरन्त डाक्टर के पास ले जाया गया। डाक्टर को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यह सब कैसे हो गया। इतना करंट लगने के बाद तो बचने की भी उम्मीद नहीं रहती। जरूर कोई ईश्वरीय शक्ति ने काम किया है और वह ईश्वरीय शक्ति है "नवकार महामंत्र"। तब से अब तक तथा आगे भी क्रम चालू है। इन्दू व उनका पूरा परिवार नवकार महामंत्र पर अपनी अटूट श्रद्धा रखता है तथा सुबह शाम नवकार महामंत्र का जाप इनके घर–परिवार में सदैव होता रहता है।

–करनावट केनवास कम्पनी,
19, रामानन रोड़, चेन्नई–600079, फोन नं. 5298747

कुण्डरीक

महाराज महापद्म के दो पुत्र थे। एक का नाम था पुण्डरीक और दूसरे का कुण्डरीक। एक दिन मुनि का उपदेश सुनकर राजा दीक्षित हो गया और अपना राज्य भार बड़े पुत्र पुण्डरीक को सौंप दिया। कुछ दिनों बाद जब वे मुनि पुनः वहाँ पधारे तो पुण्डरीक ने गृहस्थ धर्म अंगीकार किया और कुण्डरीक ने दीक्षा धारण की। कुण्डरीक ने कुछ ही दिनों में ग्यारह अंगों का गंभीर ज्ञान प्राप्त कर लिया। तपश्चर्या भी उनकी कठोर थी। पारणे के दिन जैसा लूखा–सूखा आहार मिलता, उसी से वे अपना निर्वाह कर लेते थे। इस कारण उनके शरीर में दाह ज्वर की बीमारी पैदा हो गई। समय पाकर स्थविर मुनि कुण्डरीक को साथ ले उसी नगर की ओर चले आये।

महाराज पुण्डरीक को ज्योंही मुनि के आगमन की खबर मिली, वे सेवा में उपस्थित हुए और औषधोपचार के लिये मुनि को प्रार्थना कर अपनी नगरी में ले आये। स्थविर मुनि कुण्डरीक के पास दो साधुओं को छोड़कर अन्यत्र विहार कर गये। कुण्डरीक मुनि भी कुछ दिनों में पूर्ण स्वस्थ हो गये। लेकिन स्वस्थ हो जाने पर भी उनकी इच्छा विहार करने की नहीं हुई। राजमहलों के सुन्दर और स्वादिष्ट व्यंजनों की आसक्ति ने उन पर अधिकार जमा लिया। राजा पुण्डरीक ने जब यह हाल सुना तो वे मुनि के निकट आये और साधु जीवन की तरह–तरह से सराहना करते हुए अपने जीवन की निन्दा करने लगे। राजा की बातों को सुनकर कुण्डरीक मुनि मन ही मन लज्जित हुए और वहां से विहार कर स्थविर मुनि के पास पहुंच गये। लेकिन जब मन किसी चीज में फंस जाता है तब उससे सहज ही छुटकारा पा लेना बड़ा मुश्किल होता है। कुण्डरीक मुनि विहार कर स्थविर मुनि के पास तो आ गये, लेकिन रसना के सुस्वाद को वे नहीं भूल सके। इसी से वे कुछ ही दिनों बाद स्थविर मुनि को छोड़कर पुनः अपने भाई की राजधानी में आ धमके। ज्ञात होने पर पुण्डरीक राजा ने उनका स्वागत किया और उनके संयम की भूरि–भूरि प्रशंसा की। लेकिन कुण्डरीक का मन संयम से अब बिल्कुल विचलित हो चुका था। यह देखकर पुण्डरीक ने कहा– "आप अब संयम पालना क्यों नहीं चाहते?" उत्तर में कुण्डरीक मुनि ने कोई जवाब नहीं दिया। राजा समझ गया कि मौन स्वीकृति का लक्षण है। वे स्वयं राजवैभव से ऊब चुके थे। अतः अपने स्थान पर कुण्डरीक मुनि को आरूढ़ कर स्वयं पंच महाव्रतधारी मुनि हो गये। दोनों ने अपनी–अपनी इच्छानुसार कार्य किया था। लेकिन कुण्डरीक मुनि का कार्य स्वर्ग से नरक में ले जाने वाला था और पुण्डरीक का नरक से स्वर्ग में।

पुण्डरीक मुनि स्थविर मुनि के दर्शन न होने तक अन्न–जल ग्रहण नहीं करने का अभिग्रह धारण कर वहां से चल दिये। उधर कुण्डरीक भूखे गिद्ध की तरह राज-भोगों के पीछे पड़े। जिससे उनके शरीर में अनेक रोग हो गये और तीन दिन के बाद ही उनका शरीरान्त हो गया। इस तरह तीन दिन के भोग विलासों ने ही उन्हें नरक में फेंक दिया। इधर पुण्डरीक मुनि भी तीन दिनों में स्थविर मुनि के पास आ पहुँचे। कुछ समय बाद उन्होंने आजन्म संथारा ले अपनी जीवन नौका को सर्वार्थसिद्ध विमान में पहुँचा दिया। इससे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि जो विषय वासनाओं के दास हो जाते हैं, उनको वैसी ही गति होती है। जैसी कि कुण्डरीक की हुई।

जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ

प्रो. चांदमल कर्णावट

प्रस्तुत सूक्ति आचारांग सूत्र से ली गई है। इसका अर्थ है– जो एक (आत्मा) को जानता है, वह सबको जानता है। आत्मा को जानने का अभिप्राय अपने आपको जानना है। अन्यान्य पदार्थों को जाने बिना कोई अपने आपको नहीं जान सकता। इस प्रकार अपने आपको जानने वाला सब कुछ जानेगा ही, अन्यथा वह आत्मा या अपने स्वरूप को नहीं जान सकता। अनात्म पदार्थों को जाने बिना कोई उनमें और आत्मतत्त्व में भेद नहीं कर सकता। उनके हानिकारक प्रभावों को जाने बिना उनसे बच नहीं सकता।

महत्त्व– संसार में चेतन और जड़ अथवा जीव-अजीव दो पदार्थ ही मुख्य हैं। इन दोनों में भी चेतना या आत्मा ही प्रमुख कार्यकारी तत्त्व है। चेतन और जड़ दोनों को पृथक् पृथक् जानकर इनका पृथक्करण करना मुक्ति है और इनका पृथक्करण न करना संसार है। उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन 36 जीवाजीवविभक्ति में इसी का वर्णन है। हिन्दी कवि की ये पंक्तियां इसी विषय में विचारणीय हैं–

जो अपने को पहचान सके, मैं उसको ही कहता ज्ञान।
विज्ञान तुम्हारे मिथ्या हैं, सच्चा है केवल आत्मज्ञान।।

बोधकथा– जहां जहां प्रकाश पहुंचता, वहां वहां अंधेरा टिक नहीं सकता था। वह नष्ट हो जाता था। अतः उसने तंग आकर भगवान से इसकी शिकायत की। वह बोला–"भगवन्! प्रकाश मेरे पीछे पड़ा हुआ है। वह मुझे कहीं टिकने नहीं देता। वह मुझे नष्ट कर देता है।" प्रकाश को बुलाया गया। वह बोला– "भगवन्! मैंने तो अंधकार को देखा तक नहीं है। वह कैसा है, मैं जानता तक नहीं।" निष्कर्ष यह कि जहाँ प्रकाश पहुंच जाता है, वहां अंधकार रहता ही नहीं। दोनों साथ रह ही नहीं सकते।

इसी प्रकार आत्मज्ञान का प्रकाश हो जाने पर, अज्ञान टिक ही नहीं सकता, वह भाग खड़ा होता है। आत्मज्ञान चेतना की पहिचान है और अज्ञान है जड़ तत्त्वों का अंधकार। जब आत्म-तत्त्व की या चेतन तत्त्व की पहिचान हो जाती है, उसका प्रकाश हो जाता है तब जड़ तत्त्व का महत्त्व रूप अंधकार नष्ट हो जाता है। आत्मा जड़ पदार्थों में मोहित नहीं होता। उनमें आसक्त नहीं बनता। वह आत्मस्वरूप में आत्मा के शाश्वत सद्गुणों क्षमा, संतोष विनय, सरलता आदि में रमण करता रहता है। गीतकार की ये पंक्तियां देखिए–

सदा जड़ की कुसंगति से, बनी जड़ बुद्धियां अपनी,
आज अंतरथ अम्बर में, सहज चैतन्य घन छाए
धन्य है पुण्य प्रभु जिनसे शरण में आपकी आए।।

एगं या आत्मा को जानना क्यों आवश्यक?– जो चेतना या आत्म तत्त्व को नहीं जानकर जड़ पदार्थों को ही जानता है,वह उनमें ही फंसा रहता है। वह कभी अपने आपके विषय में, आत्मा के विषय में सोचता ही नहीं। जड़ पदार्थों में आसक्त रहने वाला आत्म गुणों को जानता ही नहीं, उन्हें प्राप्त करने का प्रयास ही नहीं करता। उसकी बुद्धि जड़ बन जाती है, फलस्वरूप वह आत्म उत्थान नहीं कर सकता।

जड़ पदार्थों में आसक्त/पागल बना आत्मा उनको जोड़ने में अनेक पाप करता है। वह क्रोध, कपट, झूठ, हिंसा, लोभादि पापों में डूबा रहता है। उसे कभी शांति और समाधि प्राप्त नहीं होती।

यह जानना आवश्यक है कि जड़ पदार्थ अलग हैं– शरीर, धन, परिवार, भवन आदि अलग हैं और चेतन आत्मा अलग है। ऐसा जानने से हमारी दृष्टि भौतिक न रहकर आध्यात्मिक बनती है। इसके साथ हमारा आचरण और कार्यव्यवहार बदल जाता है। हम जड़ पदार्थों से आसक्ति कम करने लगते हैं और आत्मगुणों से हमारा संबंध दृढ़ बनने लगता है। हम जीवन में संतोष, क्षमा, सरलता, विनय जैसे सद्गुणों को अपनाने लगते हैं।

इस आत्मस्वरूप में ही परमात्मस्वरूप निहित है। यह आत्मा ही परमात्मा है– **अप्पा सो परमप्पा।** जड़, चेतन या अनात्म और आत्म-पदार्थ की भिन्नता को समझकर ही हम सच्ची शांति और समाधि प्राप्त कर सकते हैं, परमात्मस्वरूप प्राप्त कर सकते हैं।

अतः आवश्यक है कि हम अपनी दृष्टि बदलें। इससे जीवन का स्वरूप ही बदल जायेगा। केवल शरीर पर, उसकी आवश्यकताओं पर ही ध्यान न देकर हम अपनी आत्मा की शुद्धि हेतु उसके उत्थान व कल्याण पर भी ध्यान देंगे। हमारा एकपक्षीय जीवन आज की सबसे बड़ी समस्या है। इसका समाधान एक आत्मा को जानना पहचानना और आत्मिक गुणों का विकास करना है। इससे सम्पूर्ण विश्व शांति की श्वास ले सकेगा। सर्वत्र शांतिमय वातावरण फैलेगा और व्यक्ति समाधि और सच्चा सुख अनुभव करेगा।

पूज्य आचार्य श्री हस्ती की ये प्रेरक पंक्तियां यही संदेश दे रही हैं–

समझो चेतन जी अपना रूप, यो अवसर मत हारो।
ज्ञानदरसमय रूप तिहारो, अस्थि मांसमय देह न थारो।
दूर करो अज्ञान, होवे घट उजियारो

–35, अहिंसापुरी, उदयपुर(राज.)

धर्मवीर लोंकाशाह : इक्कीस तथ्य

श्री दिलीप धींग 'जैन'

1. परिवार—माता : गंगा बाई, पिता : हेमाशाह चौधरी,
   पत्नी : सुनन्दा पुत्र : पूर्णचन्द्र
2. जन्म— स्थान : अरहट्टवाड़ा (गुजरात)
   तिथि : कार्तिक पूर्णिमा वि.सं. 1472
3. लोंकाशाह जब मात्र 23—24 वर्ष के थे, तब वर्ष भर के अन्तराल में उनके माता—पिता का देहावसान हो गया। इसके पश्चात् वे अहमदाबाद में रहने लगे।
4. अहमदाबाद नरेश मोहम्मदशाह ने लोंकाशाह की तीक्ष्ण बुद्धि, ईमानदारी, त्वरित निर्णय—क्षमता तथा उनके मानवीय सद्गुणों से आकर्षित होकर उन्हें राज्य का कोषाधिकारी मनोनीत किया।
5. अहमदाबाद नरेश के सत्ता—लोलुपी पुत्र कुतुबशाह ने उसके पिता को विष देकर मार डाला। इससे लोंकाशाह का धर्म के प्रति रूझान बढ़ गया तथा उन्होंने राजकीय पद का त्याग कर दिया।
6. लोंकाशाह की लिखावट बहुत सुन्दर, सुपाठ्य तथा आकर्षक थी। इससे प्रभावित होकर यति ज्ञान सुन्दर जी ने उनको आगम ग्रन्थों की प्रतिलिपि करने का कार्य सौंपा।
7. प्रज्ञाशील लोंकाशाह आगम-प्रतिलिपि का कार्य लगन से करने लगे। वे महज लिपिकार ही नहीं थे, वे एक सजग स्वाध्यायी और गंभीर अध्येता के रूप में आप्त वचनों को हृदयंगम करने लगे।
8. मूल आगम दशवैकालिक सूत्र का लिपि कार्य करते समय उनकी तर्क मनीषा आन्दोलित हो उठी। उन्हें एक उपाय सूझा— आगमों का पुनः पुनः स्वाध्याय करने के लिए दो प्रतियां तैयार करना। एक दिन में, दूसरी रात्रि में। एक प्रति वे अपने पास रख लेते।
9. एक बार ज्ञान सुन्दरजी ने लोंकाशाह के घर से आगम की प्रतियाँ मंगवाई। उस समय लोंकाशाह घर पर नहीं थे। उनकी भद्र भार्या ने पूछा—'दिन वाली दूँ या रात वाली?' इससे लोंकाशाह से आगम-लेखन का कार्य वापस ले लिया गया।
10. इस घटना से लोंकाशाह की आगम—स्वाध्याय की रुचि तीव्रतर हो उठी। श्रावक—श्राविकाओं को आगम रखने और पढ़ने का पूरा अधिकार होता है— इस बात को उन्होंने आगे बढ़ाया।
11. श्रुत और आचार की एकनिष्ठ आराधना से उनकी तेजस्विता प्रखर होती चली गई। धर्म के नाम पर होने वाले आडम्बर और सुविधाभोग की वृत्तियाँ देख उनका मन व्यथित हो गया। श्रमणाचार (और श्रावकाचार में

भी) में तेजी से पनप रहे स्वच्छन्दाचार को उन्होंने खुली चुनौती दी। उनका विरोध व्यक्ति या परम्परा से नहीं, विकृतियों से था।

12. चहुँ और लोंकाशाह की चर्चा होने लगी। वे मैत्री भाव से ओत–प्रोत, सत्य के प्रति दृढ़, साधना और विचारों की ऊर्जा से भरे थे। इसलिए निर्भीक तथा निःशंक थे।

13. उनकी धर्म-क्रान्ति के शंखनाद से वातावरण बदलने लगा। वे निन्दा और प्रशंसा से परे रहकर धर्म–ध्वजा लिये आगे बढ़ते रहे।

14. उस समय के जाने माने श्रेष्ठी लखमसी भाई संघपति की हैसियत से लोंकाशाह से शास्त्रार्थ करने के लिए प्रस्थित हुए। सत्य की सतत साधना से आलोकित लोंकाशाह के आभामण्डल में लखमसी भाई शास्त्र चर्चा के उपरान्त लोंकाशाह के समर्थक बन गये। इससे लोंकाशाह अभियान को बल मिला।

15. उस समय अरहट्टवाड़ा, सिरोही, पाटण और सूरत के जैन संघ अहमदाबाद में थे। चारों संघों के सदस्यों ने लोंकाशाह से धर्म और तत्त्व पर मुक्त चर्चा करने का विचार किया।

16. लोंकाशाह शुष्क तार्किक नहीं थे। इसलिए उनकी बातों का गहरा असर होता था। चारों संघ लोंकाशाह से न सिर्फ सहमत हुए, अपितु चारों संघ–प्रमुखों ने अनगार धर्म अंगीकार करने की प्रबल इच्छा व्यक्त की। जिससे धर्म के रूढ़ि मुक्त स्वरूप का व्यापक प्रचार–प्रसार हो सके। जबकि उस समय लोंकाशाह स्वयं श्रावक ही थे।

17. चारों संघ–प्रमुखों के इस अद्भुत परिवर्तन से इकतालीस और व्यक्ति दीक्षा के लिए तत्पर हो गये। चूंकि लोंकाशाह स्वयं श्रावक थे, इसलिए दीक्षा के लिए एक मुनिराज को आमंत्रित किया गया। पैंतालीस व्यक्तियों ने एक साथ दीक्षा ले ली। वि.सं. 1527 में घटी यह घटना ऐतिहासिक, अपूर्व और प्रेरक है। चार संघ प्रमुखों सहित 45 व्यक्तियों द्वारा एकाएक घरबार छोड़ देना तथा दीक्षा के लिए मुनिराज को आमंत्रित करना, सत्य के लिए सर्वस्व समर्पण और उदारता का उत्कृष्ट उदाहरण है।

18. आगमों पर आधारित लोंकाशाह लिखित दो कृतियों का उल्लेख मिलता है–"लुंकाना सद्धियां अठावन बोल;;"तथा "लुंकानी हुण्डी तैंतीस बोल"।

19. वि. सं. 1536 में वीर लोंकाशाह ने भी जैन आर्हती दीक्षा अंगीकार कर ली। तब तक लाखों व्यक्ति उनके धर्म–क्रान्ति अभियान से जुड़ चुके थे।

20. पंथवादियों और सुविधाभोगियों को धर्म का आडम्बरविहीन वैज्ञानिक स्वरूप नहीं जँचा। वे लोंकाशाह के विरुद्ध दुष्प्रचार करने लगे, पर सफल नहीं हुए। उन्होंने कायरता का रास्ता अपनाया। लोंकाशाह इन्द्रप्रस्थ(दिल्ली) से विहार कर अलवर पहुंचे। यहाँ किसी अधर्मी ने

धर्मप्राण लोंकाशाह को विषयुक्त आहार दे दिया। विषाक्त भोजन ग्रहण करने के बाद उन्हें अनहोनी का आभास हो गया। समता भाव को कायम रखते हुए तुरन्त संलेखना संथारा ग्रहण कर वे महाप्रयाण कर गये। यह घटना वि.सं. 1546 की है।

21. जैन धर्म की स्थानकवासी परम्परा के पुनरुद्धारक प्रवर्तक लोंकाशाह ने विष पीकर भी विश्व को पीयूष बाँटा। उनका उत्सर्ग व्यर्थ नहीं गया। श्रमण संस्कृति के इतिहास व उत्कर्ष में अनेक नये प्रेरक अध्याय जुड़ते चले गये।

–पो. बम्बोरा, जिला– उदयपुर (राज.)

नमन करें हम

डॉ. चन्दनबाला मारू

नमन करें हम तीर्थंकर प्रभु महावीर स्वामी को।
समता, दया, मैत्री, मुदिता के मूर्त रूप नामी को।।

भारत भूमि मगध प्रान्त के, कुण्डलपुर में जन्म लिया,
त्रिशला माँ सिद्धार्थ पिता, जन जन का मन था हरण किया।
बाल्यकाल में जिस शक्ति ने देवों को भी चकित किया,
खेल खेल में विषधर को धर, निज हाथों से दूर किया।
ऐसा करके दंग किया, उस निर्भय आत्मारामी को।।1।।

तरुण अवस्था में मुनि बनकर, तप से कान्तिमान बने,
वर्षो तक रह निराहार, वे समता के आधार बने।
ध्यान मौन चिन्तन में रत रह, आत्म तत्त्व की खोज करी,
क्रोध–लोभ–मद–मोह जीतकर, आत्मा जिनकी शुद्ध बनी।
मौन ज्ञान वरा जिसने, उस शाश्वत सुख धामी को।।2।।

धर्म है समता, पाप विषमता के स्वर को गुंजित किया,
प्राणिमात्र तुल्यात्म बता, अहिंसा को शिवरूप दिया।
अनेकान्त से कर दिग्दर्शन, संघर्षों का अन्त किया,
विश्व मैत्री संदेश सुना, हिंसा का क्रन्दन शान्त किया।
शांत दान्त उस सदानन्द, परमातम पदगामी को।।3।।

जीवन में तृप्ति पाकर, तृष्णा से जो दूर रहे,
अध्यात्म साधना में रत हो, आत्मनि तुष्ट संतुष्ट रहे।
मन–तुरंग को दे लगाम, इच्छाओं को सीमित रखता,
मोह–मान–मद–लोभ आदि को सदा पृथक् ही जो रखता।
विनय विनत हो नमन करें, उस महागुणी ज्ञानी को।।4।।

–1425, प्रभातनगर, सेक्टर नं. 5, हिरणमगरी, उदयपुर (राज.)

जैन संस्कृति : सार्थक अस्तित्व की तलाश

कुमार अनेकान्त जैन

आधुनिक समस्या

वर्तमान समय में हम दो प्रकार की विचारधाराओं से ग्रसित हैं, एक पारम्परिक विचारधारा और दूसरी विकासवादी विचारधारा। हमारे मन में यह अन्तर्द्वन्द्व सतत चलता रहता है कि जैन संस्कृति को हम पारम्परिक और विकासवादी इन दोनों धाराओं के साथ संतुलन बिठाते हुये कैसे गति प्रदान करें। हम परम्परा से नहीं कट सकते, क्योंकि हमारी संपूर्ण विरासत पारम्परिक है। हम विकासवाद से भी अछूते नहीं रह सकते, क्योंकि हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर उत्तर–आधुनिकता की ओर बढ़ता हुआ ज्ञान–विज्ञान और धन–सम्पदा से सुसज्जित वर्तमान युग हावी है। हमें इसके सामने भी अपनी संस्कृति, सिद्धान्तों और संस्कारों की प्रासंगिकता सिद्ध करनी है। यह हमारी वह आधुनिक समस्या है जिसका समाधान हमें ग्रन्थों में नहीं मिल सकता। इसका समाधान हमारे स्वयं के विवेक से संभव है।

परम्परा और विकास की समस्या

निश्चित रूप से परम्परा और विकास के अन्तःसम्बन्ध समस्याग्रस्त हैं। हम जैन सिद्धान्तों को आधुनिक संदर्भों में प्रासंगिक होने का भले ही कितना भी दावा करते हों, किन्तु सच यह है कि आधुनिक पीढ़ी को हम यह समझाने में असफल हो रहे हैं कि गाय और भैंस के स्तनों में मशीन लगाकर जबरन निकाले गये डेयरी के दूध मांसाहार हैं अथवा नहीं, क्योंकि पाश्चात्त्य देशों में वह सब Non-Vegeterian ही कहा जाता है जो Animal Product होता है, अब वह चाहे दूध, दही, घी ही क्यों न हो। छने हुए पानी को उबाल कर पीना, उसमें लौंग इत्यादि डालकर उसकी मर्यादा को अधिक करना, हफ्तों से फ्रिज में रखे किसी मिनरल वाटर से ज्यादा शुद्ध व अहिंसक होता है। प्याज, लहसुन, अदरक औषधियों के रूप में अनन्त गुणकारी शाकाहारी पदार्थ होते हुये भी हम इन्हें इसलिये नहीं खाते, क्योंकि इनमें अनन्त सूक्ष्म जीव होते हैं, जो हमें आंखों से दिखायी नहीं देते, बल्कि भिण्डी, अमरूद इत्यादि कई पदार्थों का प्रयोग हम हमेशा करते हैं जिनमें साक्षात् रेंगते हुये जीव तक दिखायी पड़ जाते हैं। अन्य और भी कई आचारगत समस्यायें हमारे सामने मुंह बाये खड़ीं हैं जिनका वास्तव में कोई निश्चित व्यावहारिक समाधान हमारे पास नहीं है। इसमें या तो हम रूढ़ हो जाते हैं या फिर स्वच्छन्दी। जबकि ये दोनों ही स्थितियां हमारा समाधान नहीं है। परम्परा कहती है पानी छानो, उबालो, उसकी मर्यादा रखने के लिए उसमें लौंग

इत्यादि डालो, विकास कहता है पानी शुद्ध चाहिए न! मिनरल वाटर की बॉटल खरीदो और पियो, 100 प्रतिशत शुद्धता की गारंटी है।

क्या परम्पराएं जड़ हैं और विकास गतिमान?

आज के संदर्भ में परम्परा और विकास प्रायः विपर्यायवाची शब्द माने जाने लगे हैं। उनका उपयोग दो विपरीत ध्रुवीय संप्रत्ययों के रूप में किया जाने लगा है। परम्पराओं को जड़ और विकास को गतिमान मानना हमारी विचार प्रक्रिया में रूढ़ हो गया है। भारत में पाश्चात्त्य का घातक भूत बड़ी आसानी से जगह बना गया। हमने भी अपनी विरासत कुर्बान कर दी। एक तरह से यह हमारी निजी कमजोरियों का ही नतीजा है। यह सीधे साधे उन समस्त बौद्धिक और सांस्कृतिक आधारों पर आघात करता है जिनसे जैन समाज और व्यक्ति के संस्कारों की रचना हुयी है। हमारी अत्याधुनिकता ने धीरे–धीरे इन सभी स्रोतों को सुखा दिया है जिनके द्वारा एक जैन अपनी आत्मा, अपनी अस्मिता और अपने अस्तित्व को संजोता संभालता है। इसी कारण वर्तमान में हम भी दो नावों पर खड़े हुये एक आत्मउन्मूलित आदमी बन गये हैं, जिसका एक भाग तो परम्परा से जुड़ा है और दूसरा भाग पश्चिम की आधुनिक जीवन शैली, चिन्तन पद्धति और उसकी संस्कृति के प्रति अनुरक्त है, चूंकि इन दोनों नावों का आपस में किसी किस्म का कोई संबंध नहीं है, इसलिए हमारा पारम्परिक एवं सांस्कृतिक पक्ष उतना ही खोखला बन गया है जितना हमारा आधुनिक पक्ष कृत्रिम और दिखावटी। बाहर का प्रभाव हमारे मानव को जितना अधिक आत्मनिर्वासित कर रहा है, उतने ही अन्दरूनी ऊर्जा के स्रोत सूखने लगे हैं।

परम्पराएं तो जरूरी हैं

परम्परा और आधुनिक विकास इन दोनों की स्थिति अत्यन्त द्वन्द्वात्मक है। जैन संस्कृति अतीत के गत प्रयोग जीवाश्म के रूप में प्रकट नहीं हुयी है। उसमें प्रकट रूप से प्रच्छन्न ऊर्जा है। उसके बिम्ब, आचार, सिद्धान्त और प्रतीक, मूल्य और अर्थ वर्तमान के लिये भी प्रासंगिक हैं और भविष्य के लिए भी। वर्तमान की जड़ें अतीत में होती हैं और भविष्य में वर्तमान का विस्तरण होता है। बदलते संदर्भों में भी हमारी परम्परा और संस्कृति समाज को जीवन क्षमता और दिशा-संकेत देती है। यह बात चिन्तनीय है कि क्या विकास की प्रक्रिया पारम्परिक सांस्कृतिक मूल्य बोधों से असंपृक्त रह सकती है?

अणुव्रतों महाव्रतों की अस्मिता?

प्रायः जैन संस्कृति और धर्म के विचार के प्रसार में आचार को बाधक माना जाता रहा है। अजैन ही क्या, जैनों तक में यह कहते सुना जाता है कि कठोर आचार संहिताओं के कारण जैन धर्म विश्वधर्म बनने से रह गया। ऐसी

समस्याओं पर हमें यह कहना पड़ता है कि जैन धर्म Quality पर विश्वास करता है Quantity पर नहीं। यही जैन धर्म की विशेषता है। हम यह कहकर संतुष्ट हो जाते हैं, किन्तु आधुनिकता के बाद अब उत्तर आधुनिक युग में, वैश्वीकरण के इस दौर में हमारे अणुव्रतों और महाव्रतों के सिद्धान्त एक बार फिर अपनी अस्मिता पर प्रश्न चिह्न लगाये हमारे समक्ष खड़े हो गये हैं। जितनी तीव्रता से युग और वातावरण परिवर्तित हो रहा है। उतनी तीव्रता से हम अपनी प्रासंगिकता को सिद्ध नहीं कर पा रहे हैं।

आचार मीमांसा और उत्तर आधुनिकता

वास्तविक व्रतों का स्रोत अतीत है और अतीत में रचित शास्त्रों से प्रेरणा लेने की भावना लुप्त हो रही है, किसी तरह उसके अंश बचे हैं जो नारों के रूप में आचार को वैचारिक आधार दे रहे हैं, व्यावहारिक नहीं। इसलिये आचार अपना ठोस आधार वर्तमान में तलाश रहा है जो वस्तुतः आधुनिकता के तत्त्वों से मिलकर बना होता है । उसे अपनी प्रासंगिकता आधुनिकता के सापेक्ष सिद्ध करनी पड़ती है, इसलिये वह स्वयं को आधुनिकता से ज्यादा श्रेष्ठ और उपयोगी बतलाता है। उसका आत्माभिमान कायम रहता है। यह उत्तर आधुनिक युग भी आचार को यह दखलंदाजी करने देता है,क्योंकि उसे विगत के साथ निरंतरता और उसके मूल्यों की आवश्यकता है। निरंतरता की उपलब्धि होते ही दखलन्दाजी की प्रक्रिया उल्टी हो जाती है और यह युग आचार में हस्तक्षेप करने लगता है। वह अणुव्रतों और महाव्रतों को उत्तर आधुनिकता की शक्तिशाली शर्तों के अनुसार गढ़ने लगता है। मूलभावनाओं को क्षीण करने की कीमत पर भी अणुव्रतों में पाँच सितारा होटल का डिनर, हवाई जहाज का शाकाहारी भोजन (जो उसी पाकशाला में तैयार होता है जहां मांसाहार तैयार होता है) और महाव्रतों में मोबाइल फोन, पेजर प्रवेश करने लगते हैं और नये अणुव्रत, महाव्रत जन्म लेने लगते है। इसका प्रकार का विकास सर्वांगीण नहीं कहा जा सकता, क्योंकि मूल्यों के ह्रास की भूमि पर उसके महल निर्मित हैं। अतः कहाँ हमें परम्परा से जुड़े रहना है और कहां अप्रयोजनभूत रूढ़ परम्परा में परिष्कार करके विकास करना है इसका विवेक पूर्वक निर्णय करना होगा।

एकता की समस्या और हमारी सोच

सार्थक अस्तित्व की तलाश में 'एकता' एक महत्त्वपूर्ण घटक है, खासकर आज जैसे वातावरण में कौमी एकता एक आवश्यक तत्त्व है। एकता के नाम पर हमने बहुत नारे लगाये हैं। किन्तु सच तो यह है कि प्रत्येक पंथ का अनुयायी अंदर ही अंदर अन्य पंथ के अनुयायियों को घोर एकान्तवादी, वज्र मिथ्यादृष्टि और जिनधर्म का ह्रास करने वाला समझता है। हमारे लिए एकता की परिभाषा यह है कि शेष सभी जैन पंथों और परम्पराओं का हमारी

परम्परा में विलय हो जाये। वास्तविकता यह है कि इस प्रकार की एकता की कल्पना ही हमारे विघटन का मूल कारण है। अस्तित्व के संकट का सामना करने के लिए समस्त जैन पंथों, परम्पराओं, जातियों का एकजुट होना जरूरी भी है, परन्तु इस समरसता का अर्थ परम्पराओं और संस्कृतियों की विविधता का ह्रास नहीं है। आवश्यकता है परम्पराओं और संस्कृतियों के सहअस्तित्व के नये आधार की। समान लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए समस्त जैन अवश्य एक हों, परन्तु सर्वव्यापी सांस्कृतिक व पारम्परिक एकरूपता न जरूरी और न संभव है।

उदारवादी विचारों की कमी

यदि हम सचमुच यह चाहते हैं कि विभिन्न पंथों और विचारों के मध्य सामाजिक समरसता कायम रहे तो हम सभी को विचारों में तो उदार बनना होगा और चरित्र में कठोर। हमारी वैचारिक उदारता एवं सहिष्णुता हमें समाज के प्रत्येक वर्ग के बीच कषाय रहित संबंध बनाने में मदद देगी और हमारी चारित्रिक कठोरता हमें हमारी मूलभूत परम्पराओं से असंपृक्त नहीं होने देगी। यह दृष्टि हम संपूर्ण भारतीय समाज के मध्य भी निर्मित कर सकते हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश हम चरित्र में तो उदार हैं और विचारों में कठोर। हम अपनी जैन संस्कृति में ही विकसित अपने से इतर पंथ के प्रवचन नहीं सुन सकते। उनका साहित्य पढ़ नहीं सकते। उनके आगे विनयपूर्वक हाथ जोड़ने से हमें हमारा मोक्षमार्ग बाधित होता दिखाई देता है। हम खुद हर बात पर मूलधारा से अलग होकर चलना चाहते हैं। सांस्कृतिक, वैचारिक और सैद्धान्तिक विभिन्नतायें तो सदा से रही हैं और अगर उसका हम उज्ज्वल पक्ष देखें तो पायेंगे कि इन विभिन्नताओं ने सदा हमें जड़ता से बचाया है। नये विचारों ने जन्म लेने के साथ संस्कृति को दिशा और गति ही प्रदान की है। अगर ये विभिन्नतायें न हों तो हम कूप मण्डूक हो जायेंगे। नयी सोच, नयी दिशा और नये परिवेश के लिए हमारे हर द्वार बन्द हो जायेंगे। हमें तो कितनी लम्बी दूरियां तय करनी है। हम सर्जन में इतने अधिक व्यस्त हों कि इन संकीर्ण विवादों के लिए हमारे पास अवकाश ही न हो।

पहले जरूरी है सामाजिक समरसता

आज पूरे विश्व में युद्ध के बादल मंडरा रहे हैं। इसे सभ्यता का संघर्ष कहा जा रहा है। क्या सभ्यता संघर्ष करना सिखाती है? यह संघर्ष सभ्यताओं का नहीं असभ्यताओं का है। हम निश्चित तौर पर चाहेंगे कि जैन सिद्धान्त 'अनेकान्त' इस संघर्ष का निदान बने। हम पूरे विश्व से कहते हैं कि अनेकान्त को अपनाओ क्योंकि संयुक्त राष्ट्र संघ वास्तव में अनेकान्त के धरातल पर ही स्थापित है। पर विडम्बना यह है कि हम खुद उसे अपनाने में असमर्थ हैं। हम परम्परा और विकास के बीच संतुलन नहीं अपना पा रहे हैं।

वैचारिक कठोरता सामाजिक समरसता स्थापित करने में बाधक बनी हुयी है। जिनके पास इतना उदार हृदय ही न हो कि सबको सुन पढ़ सकें, स्वीकार करें या न करें, पर सहन कर सकें उनसे यह उम्मीद कैसे की जाय कि वे जैन संस्कृति कोई उन्नतिशील व व्यापक दिशा दे पायेंगे। इसलिए हमें हर कीमत पर यदि किसी बात पर सबसे पहले बल देना चाहिये तो वह है 'सामाजिक समरसता'। इसके बिना हमारे हर ख्वाब अधूरे हैं।

आइये! सहनशील बनें

हम सभी के सामने कई बड़ी चुनौतियां हैं जिनसे हमें निपटना है। इसके लिए हम सभी अपनी अपनी विचारधाराओं, परम्पराओं और सिद्धान्तों को कायम रखते हुए तथा एक दूसरे के ऊपर उन्हें न थोपते हुये कम से कम हम उन बिन्दुओं पर एक रहें जिन पर हम एक हैं। यहाँ व्यक्तिगत कषायों को अवकाश न रहे। अपने वैभव अपनी संस्कृति और अपने धर्म की रक्षा के लिए यदि किसी बात पर हमारा सम्मान न हो, कहीं कुछ सहना भी पड़े–तो सहें, कहीं कुछ सुनना भी पड़े–तो सुनें, हमें पद विसर्जित करना पड़े तो करें और अधिक क्या कहें? कहीं झुकना भी पड़े–तो झुकें, बशर्ते कोई बड़ा काम न रुके। अभी मंजिल दूर है, भगवान की कितनी सी वाणी हमारे पास सुरक्षित है। जो कुछ सुरक्षित है वो पूरी समझ में नहीं आयी है। हमारे सामने केवली कोई नहीं है। हम कैसे किसी को भी अंतिम रूप से गलत या सही घोषित कर दें? ऐसा करना सत्य की खोज के प्रति बेमानी होगी। हमें सत्य के अनेक अनुद्घाटित पक्षों को खोजना है। अतः हम किसी भी संभावना से इन्कार नहीं कर सकते। और करना भी नहीं चाहिए। यह कैसी विडम्बना है कि हम जैनेतर भाइयों के साथ तो हर प्रकार का समन्वय और वैचारिक साम्य स्थापित करके साथ उठ–बैठ लेते हैं, हंस बोल लेते हैं किन्तु अपने ही जैन कुल में जन्म लेने वाले सभी भाइयों के साथ इसलिए उठ–बैठ नहीं पाते क्योंकि वे अलग पंथ या विचारों के हैं। इस संदर्भ में पूजनीय आचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनिराज का यह संदेश हम सभी के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है– **'मत ठुकराओ, गले लगाओ, धर्म सिखाओ।'**

एक नेता की तलाश

उस समाज या संस्कृति का अभ्युदय नहीं हो सकता जिसके पास कोई प्रभावशाली एक सच्चा नेता न हो। साथ ही उस समाज या संस्कृति का भी अभ्युदय असंभव ही है जहां बहुत सारे नेता हों। किसी विद्वान् ने सच ही कहा है–

'अनायकः विनश्यति, विनश्यन्ति बहुनायकाः'

मात्र एक नेता के अभाव में तो संपूर्ण राष्ट्र तथा विश्व भी परेशान है। तब हमारी क्या बिसात? हमें एक नेता चाहिए तो सर्वगुणसंपन्न हो–

नेता विनीतो मधुरस्त्यागी दक्षः प्रियंवदः।
रक्तलोकः शुचिर्वाग्मी रूपवंशः स्थिरो युवा।।
बुद्ध्युत्साह–स्मृति–प्रज्ञा–कला–मान–समन्वितः।
शूरो दृढश्च तेजस्वी शास्त्रचक्षुश्च धार्मिकः।।

–दशरूपकम्, 2–1/2.

और यह कमी भी वक्त ही पूरी करेगा। अपकर्ष जब चरम अवस्था पर पहुंचेगा तब उत्कर्ष भी प्रारम्भ होगा ही। हम शुभ के प्रति आश्वस्त रहें और कुछ रचते जायें और यदि खुद कुछ नहीं रच सकते तो जो रच रहा है उसका उत्साहवर्द्धन करें, उसे हतोत्साहित न करें। याद रखें, परम्परा और संस्कृति के मजबूत बुनियाद वाले महल और प्रासाद एक दिन में निर्मित नहीं हुये हैं और न ही एक व्यक्ति ने निर्मित किये हैं। उनके निर्माण में हजारों वर्ष लगे हैं, तथा हजारों ऋषि मुनियों तथा कर्मठ लोगों ने निर्मित किये हैं। हम वर्तमान की उपेक्षा न करते हुये, विगत का पूरा सम्मान करते हुये सेवा, सहिष्णुता और संतुलन से जब भविष्य की ओर बढ़ेंगे तभी कर पायेंगे सार्थक अस्तित्व की तलाश। **–व्याख्याता, जैनदर्शन विभाग, दर्शन संकाय, लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, कटवारिया सराय, नई दिल्ली–110016**

पापनाशक मन्त्र

पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजय जी

नमो अरिहंताणं। श्री अरिहंतों को किया हुआ नमस्कार सभी पापों का नाशक है तथा सभी मंगलों का उत्पादक है। उसका मुख्य कारण श्री अरिहंतों का केवल ज्ञानमय स्वरूप है। ज्ञानस्वरूप रागादि पापों का नाशक है तथा मैत्र्यादि भावों का उत्पादक है। ज्ञानस्वरूप में समरस्ता होने के कारण वह हर्ष, शोक तथा शत्रुमित्र भाव से परे है। हर्ष शोक का मूल सुख दुःख का द्वन्द्व है तथा रागद्वेष का मूल शत्रुमित्रभाव की वृत्ति है। ज्ञानचेतना का सत्ता से सभी में समान भाव वर्तित होने से, उसी में रमण करने वाले श्री अरिहंतादि को किया हुआ नमस्कार कषाय भाव तथा विषय भाव को दूर कर लेता है। कषाय भाव मुख्यतः जीव सृष्टि के प्रति तथा विषय भाव निर्जीव सृष्टि के प्रति होता है। ज्ञानभाव से सचराचर विश्व के ज्ञाता द्रष्टा परमात्मा को किया हुआ नमस्कार अपनी ज्ञान चेतना को जाग्रत कर लेता है अर्थात् जब तक ज्ञान चेतना सम्पूर्ण रूप से आविर्भूत नहीं होती तब तक मात्र समता रूप ज्ञानसरोवर में अवगाहन करते परमेष्ठियों को बार–बार आदरपूर्वक नमन आवश्यक है। यह नमन ज्ञान चेतना में परिणाम रूप बनकर, जिनको नमस्कार किया जाता है उस परमेष्ठि पद की प्राप्ति करवाता है।

प्रेषक– नवरतनमल डोसी, जोधपुर

(क्रमशः2)

महावीर का स्वास्थ्य चिंतन

श्री चंचलमल चोरड़िया

संयम ही जीवन है–स्वास्थ्य की दृष्टि से पर्याप्तियों और प्राणों का बहुत महत्त्व है। जहाँ जीवन है वहाँ प्रवृत्ति तो निश्चित रूप से होती ही है। अतः हम प्राप्त पर्याप्तियों और प्राणों का अनावश्यक दुरुपयोग अथवा अपव्यय न करें, अपितु अनादिकाल से आत्मा के साथ लगे कर्मों से छुटकारा पाने के लिए सम्यक् पुरुषार्थ करें।

आहार संयम–जीवन चलाने के लिये जितना आवश्यक हो भक्ष्य.अभक्ष्य का विवेक रख कर आहार-पानी आदि ग्रहण करना।

शरीर का संयम–शरीर की अनावश्यक प्रवृत्तियों से बचना एवं सम्यक् पुरुषार्थ करना।

इन्द्रियों का संयम–इन्द्रियों से क्षमता से अधिक तथा अनावश्यक कार्य न लेना। वीर्य का नियंत्रण रखना अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करना। विषयों को उत्तेजित करने वाली प्रवृत्तियों एवं वातावरण से यथासंभव दूर रहना।

श्वास का संयम–मन्द गति से दीर्घ श्वास लेना तथा पूरक और रेचक के साथ-साथ कुम्भक कर श्वास को अधिकाधिक विश्राम देना। जितना अधिक श्वास का संयम होगा उतना व्यक्ति संवेगों से सहज बचेगा। इससे शरीर और मन को बहुत आराम मिलता है, आवेग नहीं आते हैं। आवेग से शरीर में असंतुलन और राग होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

भाषा का संयम–वाणी का विवेक एवं यथासंभव मौन रखना, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर मधुर बोलना। अनावश्यक बोलने से जीवनी शक्ति क्षीण होती है। वाणी के प्रकम्पन हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। ध्वनि और मंत्र चिकित्सा का यही आधार होता है। वाणी शरीर और मन दोनों को प्रभावित करती है।

मन का संयम–मन से अनावश्यक मनन, चिन्तन, स्मृति और कल्पनाएँ न करना अर्थात् मन की सम्यक् प्रवृत्ति करना। मनोबल कमजोर करने वाले दृश्यों को न तो देखना और न सुनना मन का संयम होता है। हिंसा, क्रूरता, घृणा, कामुकता, भय इत्यादि भावों में रहना मन का असंयम है।

उपर्युक्त सभी का आचरण अर्थात् संयम महावीर के अनुसार स्वास्थ्य की कुंजी होता है। सभी रोगों का कारण प्रवृत्तियों के असंयम से होने वाला असंतुलन ही होता हैं।संयम से शरीर में रोग उत्पन्न होने की संभावनाएँ काफी कम हो जाती हैं। यदि रोग की स्थिति हो भी जाती है तो संयम से पुनः शीघ्र स्वास्थ्य को प्राप्त किया जा सकता है। **(क्रमशः)**

–चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर(राज.)

(क्रमशः 2)

वृद्धावस्था में कैसे जीयें ?

श्री पूनमचन्द चौपड़ा

वृद्धावस्था में क्या करें तथा क्या नहीं करें-

26. धीरे बोलें, मीठा बोलें। लबाड़े नहीं करें।
27. धीरे चलें व आगे देखकर चलें। चलते समय इधर–उधर ताक–झांक नहीं करें।
28. जरूरतों को बिल्कुल सीमित कर दें। आवश्यकताएँ जितनी कम होंगी, उतना ही लाभ है।
29. वृद्धावस्था आने से पहले ही अपनी जरूरत की सारी सुविधाएँ जुटा लें। बाद में प्रायः कोई सुविधाएँ नहीं देता है।
30. अपना ज्यादातर समय स्वाध्याय, धर्मध्यान, दान–पुण्य, परोपकार में लगावें। जो समय हाथ में है उसका सही–सही उपयोग करें।
31. फालतू गप्पें लगाना, पंचायतियां करना तथा निन्दा–आलोचना करना बिल्कुल छोड़ दें।
32. धैर्य, संयम, सहनशीलता तथा मनोबल बनाये रखें।
33. अधिकारों को याद करें नहीं तथा कर्त्तव्यों को भूलें नहीं।
34. चिन्तन करो, चिन्ता मत करो। शान्त रहो, मनन करो।
35. दुःख किसी को मत दो। अपमान–अनादर मत करो। क्षमा मांग लो एवं तुरन्त दूसरों को क्षमा करो।
36. बहुओं के साथ बेटी से भी अच्छा व्यवहार करें। गलती हो जावे तो तुरन्त क्षमा करें। अच्छे कामों की खूब तारीफ करें।
37. परिस्थितियों से तालमेल करें। समायोजन ही जीवन है।
38. हर परिस्थिति में सतर्क व सावधान रहें।
39. रचनात्मक सहयोग अच्छे कामों में करो। अभावग्रस्तों के अभाव दूर करो। सबका आदर करो।
40. जो व्यक्ति सब पदार्थों में समभाव रखता है, व्यर्थ परिश्रम नहीं करता है, सत्य भाषण करता है, घृणा नहीं करता है, ऋण नहीं करता है तथा आसक्ति से रहित है वह सुखी रहता है।
41. गुप्त बात किसी से कहो मत। अपना भेद किसी को दो मत। गुप्त धन प्रगट करो मत, गुप्त दस्तावेज संभाल कर रखो।
42. जहाँ अपनी अक्ल काम नहीं करे वहाँ अपने विश्वासपात्र की अक्ल उधार ले लो यानी समझदार से सलाह ले लो।

–92, पोलो प्रथम, पावटा, मण्डोर रोड़, जोधपुर

दशवैकालिक सूत्र

डॉ. अमृतलाल गाँधी

जैन आगमों में इस सूत्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि यह चार मूलसूत्रों में से एक है। अन्य तीन मूल सूत्र हैं– उत्तराध्ययन, नंदी और अनुयोगद्वार। इसकी रचना अंग शास्त्रों की तरह गणधरों द्वारा नहीं की गई है। यह सूत्र आर्य शय्यंभव द्वारा निर्मित है, अतः यह स्थविर कृत है और इसकी गणना अंगबाह्य में की जाती है।

जब शय्यंभव भट्ट आर्य प्रभवस्वामी के पास मुनिधर्म में दीक्षित हुए तब उनकी धर्मपत्नी गर्भवती थी। जब परिवार के लोग उसे पूछते कि तेरे उदर में क्या है, तो वह सकुचाते हुए कहती 'मनख'। अतः जन्म के साथ उस बालक का नाम 'मनख' रखा गया। आठ वर्ष का होने पर जब मनख(मनक) ने अपनी माता से पिताजी के बारे में पूछा तो माता ने उसे बतलाया कि पिताजी उसके जन्म के पूर्व ही जैन मुनि बन गये थे और वे अभी चम्पानगरी के आस–पास विचरण कर रहे हैं।

मनख ने तत्काल चंपानगरी की ओर प्रस्थान किया और वहां नगर के बाहर उसकी भेंट शौच पर निकले हुए आर्य शय्यंभव से हो गई। मुनि के पूछने पर उसने बतलाया कि वह आर्य शय्यंभव का पुत्र है और राजगृही से उनसे मिलने आया है तथा उन्हीं के पास दीक्षित होना चाहता है। आर्य शय्यंभव ने उपाश्रय आकर उसे मुनि दीक्षा प्रदान की, परन्तु उपयोग लगाने पर उन्हें आभास हुआ कि नवदीक्षित मुनि की आयु मात्र छः माह शेष है। इतने अल्पकाल में बालमुनि मनख अपनी सफल साधना से आत्महित कर सके, इस दृटि से उन्होंने दस अध्ययन के इस दशवैकालिक सूत्र की रचना की, जिससे शिक्षा प्राप्त कर मुनि मनख ने अपना आत्म-कल्याण किया और तभी से इसका अध्ययन अध्यापन प्रचुर मात्रा में होने लगा।

प्रथम अध्ययन

दशवैकालिक सूत्र का प्रथम अध्ययन 'द्रुमपुष्पिका' है जिसका प्रारम्भ निम्नलिखित गाथा से हुआ है–

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो।।

इस गाथा का भावार्थ है कि अहिंसा, संयम और तप रूप धर्म विश्व के सब मंगलों में श्रेष्ठ है। इसमें अहिंसा को धर्म का प्रथम अंग माना गया है। अहिंसा के पूर्ण पालन से संयम की प्राप्ति होती है जो तप से पुष्ट होता है। श्लोक के दूसरे पद के अनुसार अहिंसा, संयम और तप रूप धर्म में जिनका मन सदा रमा रहता है, उनको देवता भी नमस्कार करते हैं।

द्वितीय अध्ययन

दशवैकालिक सूत्र का द्वितीय अध्ययन 'सामण्णपुव्वयं' है जिसकी

विषय वस्तु है कि साधक को अपने ज्ञानभाव को जगाकर सर्वप्रथम कामनाओं पर विजय प्राप्त करनी चाहिये, क्योंकि उसके बिना श्रमण धर्म का यथावत् पालन नहीं किया जा सकता है। जो सुन्दर और रुचिकर भोग-सामग्री मिलने पर ठुकरा देते हैं और प्राप्त भोगों को स्वाधीनता से छोड़ देते हैं, वे जग में सच्चे त्यागी हैं। इन्हें मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। (गाथा 3) बाह्य पदार्थों के साथ रहा हुआ ममभाव ही राग उत्पन्न करके मन को चंचल करता है। अतः सर्वप्रथम ममभाव का उन्मूलन करना चाहिये। भौतिक पदार्थों से मम भाव दूर करते ही राग का बंधन ढीला हो जाता है। (गाथा 4)

इस अध्ययन में आगे रथनेमि और राजीमती के उदाहरण से यह समझाया गया है कि जो मानव जीवन के लिये वर्जित वस्तु का उपयोग करना चाहता है,वह धिक्कार योग्य है।परन्तु सम्यक् बोध वाले विलक्षण पुरुष वे हैं जो मोहभाव के उदय से चंचल बनी चित्तवृत्ति को ज्ञान के अंकुश से स्थिर करते हैं और पुरुषोत्तम रथनेमि की तरह भोगों से मन को मोड़ लेते हैं।

तृतीय अध्ययन

दशवैकालिक सूत्र के तीसरे अध्ययन का नाम 'खुड्डियायार' है। इसमें साधक के आचारों का वर्णन किया गया है। चूंकि आचार का पालन अनाचार के त्याग से होता है, अतः साधकों के लिये कुछ कर्म वर्जित हैं, जिन्हें शास्त्रीय भाषा में अनाचीर्ण कहा है और उनकी कुल संख्या 52 है। उनमें से कतिपय इस प्रकार हैं–

श्रमण वर्ग को अपने लिये बनाया हुआ, खरीद कर लाया हुआ अथवा सामने लाया हुआ आहार लेना वर्जित है। चन्दन आदि सुगंधित पदार्थ और फूलमाला का आसेवन साधु के लिये अग्राह्य है। साधु मुँह से फूंक भी नहीं देवे और खुले मुंह नहीं बोले। साधु गृहस्थ के बर्तन में आहार नहीं लेवे। साधु के लिये राजपिंड अनाचीर्ण है। साधु के लिये दांतों के प्रक्षालन का भी निषेध है। श्रमण को काष्ठ, चमड़े अथवा रबड़ के जूते पहनना, चूल्हे, विद्युत आदि की ज्योति का आरम्भ करना, शय्यातर का आहार लेना अनाचीर्ण है। भिक्षा के लिए निकले हुए साधु को गृहस्थ के घर बैठना अथवा जाति, कुल आदि बतलाकर आजीविका करना अकल्पनीय है। जैन श्रमण पूर्ण ब्रह्मचारी होते हैं। वे नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। ब्रह्मचर्य समाधि के दस स्थानों का उल्लेख उत्तराध्ययन सूत्र के सोलहवें अध्ययन में किया गया है, जो इस प्रकार है–

1. विविक्त शयनासन।
2. स्त्री कथावर्जन।
3. स्त्री के साथ एकासन एवं वार्तालाप का निषेध।
4. स्त्री के अंगोपांग टकटकी लगाकर न देखना।
5. स्त्री के वासनावर्धक शब्दादि श्रवण न करना।

6. पूर्वानुभूत भोगों के स्मरण का निषेध।
7. विकारवर्धक आहार निषेध।
8. परिमाण से अधिक आहार का निषेध
9. शृंगार-विभूषा का निषेध।
10. शब्दादि पांच कामभोगों में आसक्ति का निषेध।

ये ही ब्रह्मचर्य की नौ बाड़ें और एक कोट है जिनका सम्यक् प्रकार से पालन करना ही ब्रह्मचर्य-समाधि प्राप्त करना है। साधु के लिये नख, केश आदि को संवारना या वेशभूषा की सजावट भी अनाचीर्ण होने से अकरणीय या वर्जित है।

तृतीय अध्ययन की ग्यारहवीं गाथा इस प्रकार है–

पंचासव–परिण्णाया, तिगुत्ता छसु संजया।
पंचनिग्गहणा धीरा, निग्गंथा उज्जुदंसिणो।।

इसका भावार्थ है कि निर्ग्रन्थ हिंसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्म और परिग्रह रूप पाँच आस्रवों के त्यागी, तीन गुप्तियों से गुप्त, षट्काय जीवों की यतना करने वाले, पाँच इन्द्रियों को वश में रखने वाले धीर और ऋजुदर्शी होते हैं। बिना किसी महिमा, पूजा और लोकैषणा के निश्छल भाव से साधना करना ही निर्ग्रन्थों का मुख्य दृष्टिकोण होता है।

आगे कहा है कि निर्ग्रन्थों को शरीर तक का मोह नहीं होता। तितिक्षा धर्म के अभ्यास हेतु श्रमण उष्ण काल में ताप सहते हैं, शीतकाल में खुले बदन शीत सहन करते हैं और वर्षा ऋतु में कायिक चेष्टाओं का संगोपन कर समाधिभाव में रहते हैं। निर्ग्रन्थों की महिमा इसमें है कि वे क्षुधा, पिपासादि परीषहों का दमन करने वाले, मोह रहित और जितेन्द्रिय होते हैं। ऐसे महर्षि दुःख-मुक्ति के लिये आत्म-साधना में अपना पराक्रम लगाते हैं। **(क्रमशः)**

–सेवानिवृत्त प्राध्यापक, जोधपुर विश्वविद्यालय
738, नेहरू पार्क रोड़, सरदारपुरा, जोधपुर

धर्म हमारी असली पूंजी

नितेश नागोता

धर्म हमारी असली पूंजी, धर्म जीवन का सार।
बीत रही उमरिया पल–पल, धर्म हिया में धार।।
रुपया–पैसा, धंधा–पानी, यह जीवन का सार नहीं।
मूक जानवर है वह प्राणी, जिसे धर्म से प्यार नहीं।।
दुर्लभ मानव जीवन पाया, कुछ तो करो विचार।
धर्म और सद्संस्कारों से, होवे जीवन सुधार।

–भवानी मण्डी (राज.)

क्रमशः (11)

महामन्त्र णमोक्कार : स्वरूप एवं माहात्म्य

श्री जशकरण डागा

मंत्रराज पंचपरमेष्ठी के जाप व प्रयोग की सहज प्रक्रियाएँ– इस महामंत्र से सभी लाभान्वित हो सकें, इस हेतु यहाँ इसके जाप व प्रयोग के कुछ उपयोगी सुझाव प्रस्तुत हैं–

1. प्रातः उठते व रात्रि में शयन करते समय त्रियोग स्थिर कर कम से कम ग्यारह बार नवकार का जाप करे। तदनन्तर प्रार्थना करे– "हे प्रभो! माथे मरण छः पग मूकता पाप छः, दृष्टि जोता जहर छः। ऐसे में आपका, पंच परमेष्ठी का, केवली प्ररूपित धर्म का शरण ले आज के दिन-रात्रि में प्रवेश करता हूँ।" साथ ही तीन मनोरथ का चिन्तन करे।
2. शयन करते ही प्रायः निद्रा नहीं आती है। अतः जब तक निद्रा न आवे, तब तक मन में परमेष्ठी का जाप करते रहें। जाप से पूर्व सागारी संथारा यह कह कर करें–"आहार शरीर उपधि पचक्खूं पाप अठार। तीन बार गुणस्युं नहीं जब लग श्री नवकार।" इससे निद्रा शीघ्र व सुखद आयेगी तथा इससे सहज संवर का लाभ मिल जायेगा और कभी मृत्यु का प्रसंग भी आया तो समाधिमरण होगा। जब तक निद्रा न आवे श्वास प्रश्वास के साथ 'ऊँ अर्हन्' का अजपा जाप भी कर सकते हैं।
3. भोजन, नाश्ता, चाय, दूध आदि ग्रहण करने के पूर्व तथा बाद में भी कम से कम तीन नवकार बोला करें। भोजन करने से पूर्व भावना भावें– "अहो कोई साधु, साध्वी, साधर्मी भाई बहिन या कोई भी सुपात्र प्राणी पधारे, तो उसे आहारादि देकर फिर भोजन करूँ। भोजन करते हुए भी यह विचारे कि धर्म साधनार्थ, समाधि हेतु शरीर को यह भोजन रूपी भाड़ा दे रहा हूँ।
4. घर से बाहर जाते या किसी भी कार्य के आरंभ करते तीन नवकार मन में जप कर भावना भावे– "हे प्रभो! मेरी सभी प्रवृत्तियाँ जयणा पूर्वक हों। मैं सदा कर्त्तव्यनिष्ठ और धर्मनिष्ठ रहूँ। तदनन्तर प्रस्थान करे या कार्य आरम्भ करे। इससे न केवल सुख-शान्ति व सफलता मिलेगी, वरन् अमंगल व क्लेश भी दूर होंगे।
5. बस, गाड़ी या रेल आदि में सफर करते जब कोई अन्य कार्य न हो, तो महामंत्र का या 'ऊँ अर्हन्' का अजपा जाप (श्वास प्रश्वास के माध्यम से) करे। जाप के साथ भावना भावे–"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे संतु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।" इस नवकार महामंत्र में बीजाक्षर न होने से, इसे कभी भी कहीं भी किसी भी दशा में निःसंकोच जपा जा सकता है।

6. साप्ताहिक अवकाश के दिन कम से कम एक घण्टे का समय सबकी सुविधानुसार निश्चित कर, उस अवधि में सामूहिक नवकार का जाप करे। जाप के अंत में परमेष्ठी का स्तवन बोले। यह सामूहिक जाप धर्म स्थान के अलावा अन्य स्थान–घरों, दुकानों पर भी किया जा सकता है। जहाँ भी करेंगे वहाँ का वातावरण पवित्र होगा तथा निकट में रहे भाई बहिन भी इससे लाभान्वित होंगे।

उपसंहार– महामंत्र नवकार जिनशासन का और चौदह पूर्व का सार है। प्रभु ने फरमाया है– समग्र लोक का सार धर्म है, धर्म का सार आत्म ज्ञान है और आत्म ज्ञान का सार 'संयम' है।'' संयम के समग्र स्थान और समग्र संयमी आत्माएँ नवकार के पाँच पदों में समाहित हैं। अतः यह नवकार समग्र चौदह पूर्वों के ज्ञान का सार है, इसमें संदेह न करें।

दूसरी अपेक्षा से विचारें– लोक का सार धर्म है। धर्म का सार परम धर्म अहिंसा है और अहिंसा के पूर्ण पालक सभी महापुरुष और महान् आत्माएँ इस परमेष्ठी महामंत्र में गर्भित होने से इसे चौदह पूर्वों का सार कहा गया है।

सभी आत्मार्थियों के लिए यह त्रिकाल स्मरणीय एवं उपासनीय अति उत्तम महामंत्र है। इससे उत्तम संसार में कुछ नहीं है। इसके लिए कहा गया है–

महामंत्रं संसारसारं, त्रिजगदनुपमं, सर्वपापहारिमंत्रं।
संसारोच्छेदमंत्र विषमविषहरं, कर्मनिर्मूलमंत्रं।।
मंत्रं सिद्धिप्रदानं, शिव-सुख-जननं केवलज्ञान मंत्रं।
मंत्रं श्री जैनमंत्र, जप–जप-जापितं जन्म निर्वाणमंत्रं।।

अर्थात् यह महामंत्र संसार का सार है, तीनों लोक में अनुपम है, महान चमत्कारी है, समस्त पापों का अरि है, संसार बंध का उच्छेदक है, भयंकर से भयंकर विष का नाशक है, कर्मों का निर्मूलकर्त्ता है, सभी सिद्धियों का प्रदायक है, इसलिए बार–बार इस मंत्र का जाप करना चाहिए, जिससे निर्वाण सुख की प्राप्ति होवे।

यह परमेष्ठी महामंत्र, सर्वकर्म क्षयहार, मिथ्यात्व तिमिर विदाहरण हार, बोधि बीज का दाता, अजर, अमर पदवी का प्रदाता, मन की इच्छा का पूर्णहार, चिंता का चूर्णहार, भवोदधि तारण, दुःख विदारक, कल्याणक, मांगलिक, वंदनीय, पूजनीय है।

इस महामंत्र णमोकार के स्मरण, मनन,चिंतन से मति निर्मल और निष्पाप होती है और पापात्मा भी पवित्र होती है। समस्त विघ्न एवं दुःखों को, क्षण मात्र में नष्ट करने की इसमें अद्भुत शक्ति है। अतः आत्म-साधकों को, सारे मंत्र–तंत्र, देवी देवता, पीर पैगम्बर, बाबा संन्यासी आदि को छोड़ इस मंत्रराज को ही त्रियोग सहित एकाग्र चित्त से, पूर्ण श्रद्धा भक्ति के साथ सच्चा शरणभूत समझ सदैव जपना व स्मरण करना चाहिए। **(समाप्त)**

–डागा सदन, संघपुरा, टोंक (राज.)

समय का सदुपयोग

श्री लोकेश जैन

मनुष्य जीवन में समय का सर्वाधिक महत्त्व है। समय का उपयोग धन के उपयोग से कहीं अधिक महत्त्व का है। क्योंकि धन दुबारा कमाया जा सकता है, परन्तु बीता हुआ समय वापिस नहीं आता। इसलिए हमें अर्थ उपार्जन के साथ–साथ समय को व्यर्थ खोये बिना नियमित जीवन जीने का प्रयत्न करना चाहिए।

जो समय व्यर्थ में ही खो दिया गया, उसमें यदि धार्मिक कार्य किया जाता तो पुण्य की प्राप्ति होती। यदि उसमें कमाया जाता तो अर्थ की प्राप्ति होती। समय को स्वाध्याय या सत्संग में लगाते तो विचारों का उदय एवं सर्वतोमुखी विकास संभव होता, नियमित दिनचर्या में रत रहते तो क्रियाशीलता से स्वास्थ्य अच्छा रहता। समय का सदुपयोग ही मानव जीवन के लिए श्रेयस्कर है। यह अटल सत्य है कि नष्ट किया हुआ समय मनुष्य को भी नष्ट कर डॉलता है।

संसार का कालचक्र भी अनियमित नहीं, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र और अन्य ग्रह नियमित गति से गतिमान हैं। समय की अनियमितता होने से सृष्टि का कोई कार्य नहीं चलता। यदि समय का पालन नहीं किया जाए तो दैनिक जीवन में रेल,डाक,कारखाने,कृषि आदि सभी कार्य ठप्प हो सकते हैं। इनका संचालन अव्यवस्थित हो जाए तो सारी सामाजिक व्यवस्था चरमरा जाए। अतः हमें भी अपनी दिनचर्या को अपने कार्यों में समय की उपयोगिता के साथ तालमेल बैठाकर उसी के अनुरूप चलाना चाहिए। जैसा कि कहा है–

Early to bed and early to rise
Makes a man Healthy, wealthy and wise.

धार्मिक जीवन में भी समय का महत्त्व कम नहीं है। धार्मिक जीवन के द्वारा मनुष्य अन्तिम सुख मोक्ष को भी प्राप्त कर सकता है। मानव जीवन ही ऐसा जीवन है जिसके द्वारा समय का सदुपयोग कर मोक्ष लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

मनुष्य यदि समय का सदुपयोग करना सीख जाए,सही मार्गदर्शन के द्वारा सुन्दर, सुनियोजित शैली को जीने का आधार बना ले तो वह उसके अपने लक्ष्य तक पहुंचने में सफल हो सकता है। धार्मिक आचरण से ही वह सशक्त, सुसम्पन्न, समृद्ध, समुन्नत, निःस्वार्थ, निर्लिप्त और निर्मोही हो सकता है। उसका उदात चरित्र ही उसे लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। जैसा कि कहा है–**मानव का जीवन एक अमृत का प्याला है,**

सद्गुणों से भरा यह सच में निराला है।
इसमें एक नहीं अनेक विशेषताएँ है,
मानव सृष्टि का शृंगार है, उजाला है।

–ए 9, साधना भवन, बजाज नगर, जयपुर–302015

अनुभव

पान खाना छोड़िए

आर. प्रसन्नचन्द चोरड़िया

"खाते है पान तो बत्तीसी गंवानी पड़ेगी।
बुढ़ापे में इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी।।"

हम अपनी युवावस्था में 120 नं. की तम्बाकू मिलाकर पान खाने का बहुत शौक फरमाते थे। साथ में यार–दोस्तों को भी बड़े प्यार से खिलाया करते थे। शहर में हो या बाहर, पान खाने वाले मित्र ढूंढते हुए पहुंच जाया करते थे। बड़े प्रेम से 'नवाब साहब' कहकर पान खाने की इच्छा जाहिर करते थे। बड़ा अच्छा लगता था। कई शहरों के पान वालों से पहिचान हो गई थी, परिचित हो गये थे। सच पूछो तो हमारे रहन–सहन व चाल–ढाल को देखकर बाबोसा श्री खिंवराज जी चोरड़िया, जिनके लिए अभी भी मेरे मन में आदर व श्रद्धा है, ने 'नवाब साहब' नाम दे दिया था।

हमने पान खाये, आदत पड़ गई। कहा है–

पड़ जाय जो आदत, तो बड़ी मुश्किल से छूटती है।
जैसे लोहे की जंजीर, बड़ी मुश्किल से टूटती है।।

अब उस गलती की सजा प्रौढ़ अवस्था में चुकानी पड़ रही है। इसलिए अगर आप तम्बाकू के पान खाते हैं तो बन्द कर दीजियेगा या सिर्फ हाजमे के लिए कभी–कभी शौक फरमाइयेगा, अन्यथा हमारी जैसी हालत से सामना करना पड़ेगा, पछताना पड़ेगा। इसलिए अभी से सचेत हो जायें तो अच्छा रहेगा।

आपको यही प्रेम से कहना है।
खाकर ठोकर संभल जाना है।।

अन्यथा हमने पान खाये, दांत खराब हुए। तंदुरस्ती में कोई प्रत्यक्ष तकलीफ नहीं हुई, पर अब एक-एक दांत साथ छोड़कर जा रहे हैं। कोई आधा टूटता है कोई जड़ से उखड़ जाता है। अब खाने-पीने में तकलीफ हो रही है–बड़ी मुश्किल हो रही है।कई दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है।

अगर आप मन मजबूत बना लेते हैं, तभी तम्बाकू के पान खाना छोड़ सकते हैं। कहा है–

मजबूत मनोबल वाला, एक ही झटके में घेरा तोड़ देता है।
जैसे चट्टान से टकरा कर, निर्झर रास्ता बना लेता है।।

आप इस नसीहत को ध्यान से पढ़ें। उस समय हमने भी किसी की बात नहीं मानी, अनसुनी कर दी, तभी अब जो प्रत्यक्ष का सामना करना पड़ रहा है, वह इतना सुखदायक नहीं है। यही अनुभव आप तक पहुंचाना चाहता हूँ। बात मानेंगे तो परिणाम सुखद होंगे। बस।

–52, Kalathi Pillai Street, chennai-600079(T.N.)

जिनवाणी पर अभिमत

'जिनवाणी' का विद्वत्तापूर्ण सम्पादन पाठक की रुचि में उत्कर्ष पैदा करता है। बेहतरीन समाज-व्यवस्था के लिए उच्चतर भाव-भूमि तैयार करने में पत्रकार, सम्पादक, लेखक और कवि का बड़ा दायित्व होता है। आप अपने दायित्व को बखूबी निभा रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है।

दिनांक 14.9.2002 **दिलीप धींग, बम्बोरा**

मंत्री जी, डॉ. धर्मचन्द जी जैन के सम्पादकीय लेख बहुत ज्ञानवर्द्धक हैं। बहुत मननशील हैं जो बात, जो विषय, जो वातावरण अभी संसार में गृहस्थाश्रम में चलता है, वे बिल्कुल सही लिखते हैं। उनके लेख बहुत विचारणीय हैं, आदरणीय है। गुण ग्रहण करने योग्य हैं, बिल्कुल सच्ची बात लिखते हैं। उनके लेख में किसी भी प्रकार की साम्प्रदायिकता नहीं है। उनके लेख सम्प्रदायवाद से परे हैं। जब तक उनका लेख पूरा नहीं पढ़ लेता हूँ, मन तृप्त नहीं होता है। उनके लेख में किसी भी गच्छ की, संघ की, गण की निंदा, बुराई नहीं है। किसी की भी काट–छांट नहीं है। ऐसा लेख लिखते हैं कि सीधा मन पर प्रभाव पड़ता है और उनके लिखे हुए लेख के अनुसार चलने का नियम स्वयं अपने मन से निश्चय करके ले लेता हूँ। एक तो जोर जबरन से नियम दिलाया जाता है, एक स्वयं अपनी समझ से नियम लेता है, बहुत फर्क है। वास्तव में उनके लेख–अति मनन करने योग्य हैं। वैसे भी जिनवाणी में सब ही लेख सम्प्रदायवाद से परे हैं। कोई काट–छांट, निंदा–बुराई, अपनी बड़ाई से जिनवाणी पत्रिका अति दूर है और भविष्य में भी दूरी बनाई रखेगी।

दिनांक 24.08.2002 **श्री शांतिलाल जी जैन, तिरूवन्नामल्लै**

जिनवाणी के अंक सितम्बर 02 में 'सेवा और सामायिक' पर डॉ. धर्मचन्द जैन के विचार संपादकीय कालम में पढ़े, जो सामयिक और वस्तुपरक थे। आपने सामायिक और सेवा को मुक्ति का साधन बताया, जो सटीक है। वैसे जैन धर्म कर्मवाद में विश्वास करता है, फिर भी दस धर्मों में "वात्सल्य" एक प्रमुख अंग है, जिससे तीर्थंकर पदवी का बंध होता है। मनुष्य तीर्थंकर बनना चाहता है, परन्तु वात्सल्य अंग को स्वीकार नहीं करता और यही वजह है कि आज भाई–भाई में वैर है, और तो और हमारे गुरुओं में भी वैमनस्य देखा जा सकता है, कोई अपने को बड़ा समझता है और कोई उत्कृष्ट, ऐसे में सेवा–वात्सल्य कैसे संभव हो सकता है। आप देखेंगे वात्सल्य को ईसाइयों ने अंगीकार किया है और वे लोग किस भावना से सेवा करते है, जो सबके सामने है। क्या हम भी इसी प्रकार का सेवा भाव जागृत नहीं कर सकते?

दिनांक 19.9.2002 **श्री घेवरचन्द गोदीका, जयपुर**

मैं जिनवाणी का नियमित पाठक हूँ। प्रतिमाह पत्रिका प्राप्त करने के बाद इसे भली प्रकार से पढ़ता हूँ। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सितम्बर 2002 अंक का प्रवचन "भगवान से बढ़कर है भगवान की वाणी" पढ़ा। यह इस अनित्य संसार में सन्त परम्परा एवं स्वाध्याय परम्परा के कारण वीतराग वाणी आज भी कर्णगोचर हो रही है, का बोध कराता है।

दिनांक 19.09.200 **चन्दरसिंह लोढ़ा, फुलियाकलां**

जिनवाणी का 'जैनागम विशेषांक' वस्तुतः एक अद्वितीय और आदर्श प्रकाशन है। विद्वानों, स्वाध्यायियों एवं सभी जिज्ञासुओं के लिए एक संदर्भ ग्रन्थ है जो ज्ञानक्षेत्र में सदा मार्गदर्शक बना रहेगा। इसके परिशिष्ट की भी प्रतीक्षा रहेगी। आपका एतदर्थ अभिनन्दन।

दिनांक 26.09.2002 **चांदमल कर्णावट, मुम्बई**

जिनवाणी के सितम्बर02 अंक का पठन किया। यद्यपि इस पत्रिका में सभी रचनाएँ पठनकर मनन–चिन्तन के योग्य हैं, मगर सम्पादकीय की तो बात ही कुछ और है। इस माह के सम्पादकीय 'सेवा और सामायिक' तो जैसे स्वाध्याय का यथार्थ निष्कर्ष हो। भाव शुद्धता की कसौटी पर किया गया कर्म ही तो आत्मालोक की संज्ञा से विभूषित है तथा मोक्ष-मार्ग का प्रशस्तक। यकीनन जुलाई माह के सम्पादकीय में इसका विवेचन समाहित है। वस्तुतः साधना की श्रेष्ठता साधक के भावों पर निर्भर है– अर्जुनमाली, मुनि गजसुकुमाल जैसे अनेकों शास्त्र-संगत प्रमाण इसके पक्षधर हैं। इसके बावजूद भी कि हम लोग उच्चकुल के सांस्कृतिक, सभ्रांत, शालीन एवं धनिक वर्ग से हैं तथा जन्म से ही 'जैन' होने का सौभाग्य प्राप्त है– मगर इच्छाओं के विस्तार और लोभ के कारण शिथिलाचार अभिवर्धित है। आश्चर्य है कि जिस समाज में नैतिकता, प्रमाणिकता, विद्वत्ता एवं आदर्शों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, आज के युग में 'धन' और 'पद' सम्मान के आधार स्तम्भ बन चुके हैं। स्पष्टतः 'साधनों' के सामने 'साधना' निस्तेज होती प्रतीत होती है– आज कोई पैसे के पीछे दौड़ लगा रहा है तो कोई पैसे वालों के पीछे.....क्यों?

अन्ततः किसी भी क्षेत्र में व्यक्ति की प्रतिष्ठा का कारण यदि उसकी नैतिकता, समर्पण, सक्रियता, कर्मठता एवं विद्वत्ता प्रामाणिक होगी तो समाज में इन मूल्यों को अपनाने की प्रेरणा सुदृढ़ होगी अन्यथा यदि वैभवशीलता, पद–प्रतिष्ठा, चालाकी, चापलूसी,मक्कारी और झूठ जैसी संज्ञाओं का सम्मान होगा तो समाज में भी ऐसी प्रवृत्तियाँ अभिवर्धित होगी।

अतः जितना 'साध्य' पवित्र एवं निर्लिप्त होना अपेक्षित है उसे प्राप्त करने के लिए 'सांधन' भी उसी मापदण्ड से पवित्रता के पोषक होने चाहिए। इसके बावजूद हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि "जैन संस्कृति' की जड़ें इतनी गहरी और सार्वभौम हैं कि इतिहास के पन्नों पर ये सदा अमिट रहेंगी।

दिनांक 18.9.2002 **मोहनोत गणपत जैन, जोधपुर**

साहित्य-समीक्षा

डॉ. धर्मचन्द जैन

अष्टकप्रकरणम् (हरिभद्रसूरि)– ***अनुवादक***– *डॉ. अशोक कुमार सिंह,* ***प्रकाशक***–*1. पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई.टी.आई. रोड़, करौंदी, वाराणसी–5, 2. प्राकृत भारती अकादमी, 13–ए, मेन मालवीय नगर, जयपुर–302017,* ***पृष्ठ*** *45+138(सजिल्द),* ***मूल्य***–*200 रुपये, सन् 2002*

हरिभद्रसूरि आठवीं शती के महान् आचार्य, टीकाकार,दार्शनिक एवं साहित्य–सर्जक थे। उनके द्वारा प्राकृत एवं संस्कृत भाषा में अनेक ग्रन्थ रचे गए। 'अष्टकप्रकरण' उनका संस्कृत भाषा में रचित ग्रन्थ है, जिसमें आठ–आठ श्लोकों के 32 प्रकरण हैं। इसके 32 प्रकरणों में महादेव (जिन), स्नान (द्रव्य–भाव), पूजा (द्रव्य–भाव), अग्निकारिका (धर्मध्यान रूपी अग्नि), भिक्षा (सर्वसम्पत्करी, पौरुषघ्नी और वृत्तिभिक्षा), प्रत्याख्यान (द्रव्य–भाव), ज्ञान (विषय प्रतिभास, आत्मपरिणतिमत और तत्त्वसंवेदन) वैराग्य (दुःख, मोह, सज्ज्ञान से युक्त), तप, वाद (शुष्कवाद, विवाद तथा धर्मवाद), धर्मवाद, एकान्त नित्यपक्ष का खण्डन, एकान्त अनित्य पक्ष का खण्डन, नित्यानित्य पक्षमण्डन, मांस-भक्षण दूषण, मद्यपानदूषण, मैथुन दूषण, सूक्ष्मबुद्धयाश्रय, भावविशुद्धि, शासनमालिन्यनिषेध, पुण्यानुबन्धिपुण्य, तीर्थकृद्दान, सामायिक, केवलज्ञान, तीर्थंकर देशना और मोक्ष।

पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी के प्राध्यापक डॉ.अशोक कुमार सिंह ने अष्टकप्रकरण का हिन्दी एवं अंग्रेजी में अनुवाद प्रस्तुत करने के साथ इस पुस्तक में दोनों भाषाओं में अष्टकप्रकरण का परिचय दिया है। इससे पुस्तक की महत्ता देश एवं विदेश दोनों स्तरों पर प्रतीत हो रही है। पुरोवाक् में डॉ. भागचन्द जैन 'भास्कर' ने पुस्तक का सारांश एवं वैशिष्ट्य प्रस्तुत किया है।

अष्टकप्रकरण का यह संस्करण आचार्य हरिभद्रसूरि के विचारों का सम्यक् प्रवाहक है।

माँ– ***प्रकाशक***– *जैन प्रकाशन, 31 गुलजार चौक, पाली मारवाड़ (राज.) 3063401,* ***पृष्ठ*** *32,* ***मूल्य*** *5 रुपये*

एक संतान के लिए माँ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वही शिशु की प्रथम शिक्षक होती है। शिशु की प्रसन्नता को ही वह अपनी प्रसन्नता मानकर उसे चलना, बोलना, खाना, पीना आदि सब कार्य सिखाती हैं। वर्तमान पीढ़ी में संतति अपने माता–पिता की उपेक्षा कर अपनी सुख–सुविधा, मित्रों और अन्य स्वार्थी तत्त्वों में उलझ जाती है। ऐसे पुत्र–पुत्रियों को सीख देने के लिए यह कवितामयी 'माँ' पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। पुस्तक से तीन पक्तियाँ

उद्धृत हैं–

माँ बाप की सच्ची विरासत,
पैसा और बंगला नहीं
प्रामाणिकता और पवित्रता है।।

पुस्तक में स्थान–स्थान पर माँ और संतान के आकर्षक चित्र दिये गये हैं।

आप तो मानव हैं

श्री दिलीप धींग

मैं बिल्लियों से नहीं कहता
कि वे चूहे खाना छोड़ दें,
बगुलों से भी नहीं कहता
कि वे मछलियाँ खाना छोड़ दें,
न ही गीदड़ों और भेड़ियों से
ऐसा कुछ कहता हूँ,
भला जानवरों से क्या कहना?
लेकिन आप तो मानव हैं न।
माँस तो मानव का
आहार ही नहीं है,
माँसाहार
अप्राकृतिक है
असात्त्विक है
अमानवीय है
असांस्कृतिक है
असामाजिक है
अधार्मिक है
अनैतिक है
अवैज्ञानिक है
असंवैधानिक है
अस्वास्थ्यकर है
क्रूरतापूर्ण है इसलिए वर्ज्य है
अतः हे मनु–पुत्रों!
अपने आपको
पवित्रता व मनुष्यता से जोड़ो।

–बम्बोरा–313706 जिला– उदयपुर (राज.)

समाचार-संकलन

आचार्यप्रवर के चातुर्मास से बालकेश्वर-मुम्बई में अपूर्व धर्माराधन एवं भारी उत्साह

मुम्बई महानगर में बालकेश्वर सर्वाधिक सम्पन्न क्षेत्र है। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा 8 के पावन सान्निध्य में बालकेश्वर क्षेत्र धर्माराधना में निरन्तर अग्रसर हुआ है और हो रहा है। मुम्बई महानगर में दूर–दूर के उपनगरों से श्रावक–श्राविकाएँ प्रवचन स्थल पहुंचते हैं। आचार्यप्रवर के सामयिक एवं प्रेरक प्रवचन तथा तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोद मुनि जी म.सा. के हृदयस्पर्शी प्रवचन श्रवण कर मुम्बईवासी अभिभूत हैं। प्रारम्भ में कुछ दिनों तक श्री कपिल मुनि जी म.सा. ने और श्रावण एवं भाद्रपद में जब भी आचार्यप्रवर प्रवचन सभा में नहीं पधारे, तब महान अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. ने प्रवचन फरमाया। प्रवचनों का प्रभाव है कि भौतिकता में रचे–पचे मुम्बईवासियों में से अधिकांश ने चार महीने रात्रिभोजन त्याग का संकल्प लिया और कइयों ने जीवन पर्यन्त रात्रिभोजन न करने का नियम अंगीकार किया। आचार्यप्रवर शुद्ध धर्म साधना का स्वरूप समझा रहे हैं।

संवत्सरी पर्व पर प्रवचन, दया–संवर, उपवास–पौषध, प्रतिक्रमण का अद्वितीय उत्साह देखकर मुम्बईवासी आश्चर्यचकित हैं। प्रार्थना, प्रवचन, प्रश्न–चर्चा, प्रतिक्रमण जैसे दैनिक कार्यक्रमों के साथ ज्ञान सीखने वाले श्रावक–श्राविकाओं, युवक–युवतियों और बालक–बालिकाओं में रुचि व भावना जागृत होना महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। मध्याह्न में आचार्यप्रवर आचारांग सूत्र की एक घंटे तक वाचना देते हैं, जिसमें संतों के अलावा श्रावक–श्राविकाओं की उपस्थिति उनकी ज्ञान-पिपासा का परिचायक है। धर्मस्थान की मर्यादा के लिए आचार्य प्रवर का आह्वान सार्थक प्रतीत हो रहा है। छोटे–बड़े मुंहपत्ति या उत्तरासंग का स्वतः प्रयोग करने लगे हैं, मोबाइल–सैल की घड़ी का उपयोग भी धर्मस्थान में नहीं होता।

चातुर्मास की एक खूबी है बालकों के संस्कार शिविर एवं बहिनों के ज्ञानाभ्यास शिविर। सामायिक में बुजुर्गों की कुछ भागीदारी तो पहले से दिखाई दे रही थी। पर युवक–युवतियों का नियमित सामायिक करना विशिष्ट उपलब्धि है। शीलव्रत के खंद एवं बड़ी तपश्चर्या के नित्यप्रति प्रत्याख्यान मुम्बई चातुर्मास की अच्छी उपलब्धि है। श्रावण मास में चार मासखमण एवं भाद्रपद में सात मासखमण और लगभग सौ अठाईयों के साथ दस,पन्द्रह की तपस्याएं तपाराधन के क्षेत्र में अनुपम हैं। तप में मौन एवं चौविहार तप की साधना तपस्वियों का

मनोबल प्रकट करता है। सौ से अधिक अठाइयां होना श्रावक–श्राविकाओं की रुचि व भावना का अनुपम उदाहरण है। मुम्बई चातुर्मास को लेकर स्थानीय संघमंत्री श्री नानूभाई जो प्रतिदिन प्रवचन सभा का संचालन करते हैं, का कथन है कि बालकेश्वर में पिछले पच्चीस वर्षों में ऐसी उपस्थिति कभी नहीं रही। यह तो आचार्यप्रवर की संयम-साधना का सुपरिणाम है कि सभी लोग धर्म-साधना करने में आगे आ रहे हैं। अब तक प्रतिक्रमण हो या तप– साधना, मुम्बई में प्रभावना और प्रोत्साहन पुरस्कार दिए जाते रहे हैं, लेकिन आचार्यप्रवर के इस चातुर्मास में प्रभावना का कहीं कोई नामोनिशान तक नहीं है।

मुम्बई महानगर में व्यवस्था का कार्य जटिल है, पर संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत, संघ कार्याध्यक्ष श्री कैलाशचन्द जी हीरावत, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई के अध्यक्ष श्री पारसचन्द जी हीरावत, क्षेत्रीय प्रधान श्री नवरतनमल जी मुणोत आदि शीर्ष पदाधिकारियों ने मुम्बई महानगर के सेवाभावी श्रावकों के सहयोग से आवास–भोजनादि व्यवस्थाओं को इस युक्ति से मूर्तरूप दिया है कि आगत श्रीसंघों और श्रद्धालुओं को कोई असुविधा न रहे। आचार्यप्रवर का बालकेश्वर चातुर्मास नवयुवकों में जागृति की दृष्टि से बहुत उपयोगी रहेगा, ऐसा सभी मानकर चल रहे हैं।

उपाध्यायप्रवर के चातुर्मास से होलनांथा में अपूर्व उत्साह

परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा 3 का चातुर्मास धर्माराधना के साथ धुलिया जिलान्तर्गत होलनांथा में चल रहा है। उपाध्यायप्रवर के चातुर्मास के सुन्दर सुयोग का अधिक से अधिक लाभ उठाने की भावना से होलनांथा श्रीसंघ के सुज्ञ श्रावक–श्राविकाओं ने प्रार्थना, प्रवचन, ज्ञान-चर्चा, प्रतिक्रमण जैसे दैनिक कार्यक्रमों में भाग लेने के साथ दया–संवर, उपवास– पौषध, जप–तप और साधना–आराधना के विविध कार्यक्रमों में अपनी भावना का सुन्दर रूप रखा, जिसमें चातुर्मासिक चतुर्दशी पर छोटे से गांव में 55 दया और चौबीस पौषध से धर्म साधना की शुरूआत हुई। श्रावण एवं भाद्रपद में प्रातः प्रवचन एवं मध्याह्न में जैन रामायण के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवनादर्शों को सभी दत्तचित्त हो श्रवण करते रहे हैं। जैनेतर जन समुदाय की उपस्थिति के कारण प्रवचन सभा का नजारा देखते ही बनता है। धर्मचक्र–पचरंगियों के आयोजन के अलावा दो मासखमण, पन्द्रह, ग्यारह, नौ, आठ, पांच, तीन की अनेक तपश्चर्याएं वहां हो चुकी है। आदर्श संथारे के लिए होलनांथा की पहचान में इस चातुर्मास में श्रीमती गेंदाबाई जी पारख ने पूर्ण सजगता में स्वेच्छा से उपाध्यायप्रवर के मुखारविन्द से संथारा स्वीकार किया जो आठ दिन चला और 01 सितम्बर को सीझा। होलनांथा में ज्ञान–ध्यान, त्याग–तप और जिनशासन की प्रभावना का क्रम देखकर लगता है कि कन्हैया भूमि के नाम से पहिचान रखने वाला गांव धर्म-साधना–आराधना में किसी से कम नहीं है।

समीपवर्ती–सुदूरवर्ती क्षेत्रों के श्रीसंघों का एवं श्रद्धालुओं का आवागमन बराबर बना हुआ है और होलनांथा श्रीसंघ की स्वधर्मी वात्सल्य सेवा की सर्वत्र प्रशंसा सुनने को मिल रही है।

पालासनी में मुनि-मण्डल के चातुर्मास से ज्ञानाराधन की उमंग

जोधपुर जिलान्तर्गत पालासनी ग्राम में संतों का प्रथम चातुर्मास अपने आपमें कई मायनों में अद्वितीय है। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. एवं तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. ठाणा 2 के चातुर्मास में सत्संग सेवा के रसिक ग्रामीणजन भक्ति भावना से नित्य–प्रति प्रवचन श्रवण तो करते ही हैं, अपनी शक्ति-सामर्थ्य के अनुसार व्रत–नियमों की श्रद्धा समर्पित करते हुए चातुर्मास को दैदीप्यमान कर रहे हैं। समीपवर्ती बिसलपुर–रूड़कली आदि गांवों से भक्तजन प्रवचन श्रवण करने को पहुचते हैं जो अपने–आपमें अनुपम आदर्श है। चातुर्मास में ज्ञान–ध्यान, त्याग–तप प्रायः सभी स्थलों पर होते हैं, पर पालासनी में मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. की प्रेरणा से जैनेतर जन समुदाय में व्यसन त्याग के प्रति जो रुचि व भावना बनी वह अनुकरणीय है। बीड़ी–सिगरेट–गुटखा ही नहीं, शराब तक लोगों ने छोड़ दी है। सैकड़ों लोगों का निर्व्यसनी बनना चातुर्मास की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। गुटखा–बीड़ी–सिगरेट बेचने वाले लोग हैरान हैं कि हमारी बिक्री कम हो गई है। इससे अन्दाज लगता है कि गांव में कैसी जागृति और चेतना आई है। प्रवचन सभा में जैन–जैनेतर जनता मंत्रमुग्ध हो जिनवाणी श्रवण करती है। समीपवर्ती क्षेत्रों से आवागमन बराबर बना हुआ है, जिनकी व्यवस्था में पालासनी श्रीसंघ पलक–पावड़े बिछाये खड़ा है। स्थानीय ठाकुर साहब ने अपना विशाल कोट श्रीसंघ को आवास–भोजन आदि व्यवस्था के लिए चार माह दे रखा है, इस कारण आगत श्रीसंघों को किसी भी प्रकार की कोई कठिनाई नहीं है। तपस्या करने वालों का संघ की ओर से सत् साहित्य देकर बहुमान किया जाता है। दया–संवर , उपवास–पौषध, जप–तप में अजैनों का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। समीपवर्ती जोधपुर–पीपाड़–भोपालगढ़–बालोतरा–कोसाना के कई श्रद्धालुओं ने पालासनी पहुंचकर पर्वाराधन की साधना की। पालासनी मूल के सुश्रावक वे चाहे जोधपुर में रहते हों या सुदूर रायचूर आदि क्षेत्रों में, अपने गांव आई गंगा का भरपूर लाभ ले रहे हैं। पाली–पीपाड़ की तरह पालासनी चातुर्मास दीप्तिमान हो रहा है, इसकी सबको प्रसन्नता है।

साध्वी-मण्डल के चातुर्मासों में सभी स्थानों पर धर्माराधना एवं तपाराधना की लहर

जोधपुर–सूर्यनगरी में साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री लाडकंवर जी म.सा., सरल हृदया महासती श्री सायरकंवर जी म.सा., शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. आदि ठाणा जोधपुर जैसे विशाल नगर के पावटा, नेहरू पार्क, घोड़ों का चौक क्षेत्रों को जिनवाणी के माध्यम से पावन कर रहे हैं।

प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण के दैनिक कार्यक्रमों के साथ दया–संवर, उपवास–पौषध, जप–तप और साधना–आराधना के क्षेत्र में तीनों ही स्थानों पर उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। चातुर्मास में तेलों की और अठाइयों की झड़ी सी लगी रही। बड़ी तपश्चर्या में ग्यारह–पन्द्रह–बीस–इक्कीस तक की अनेक तपश्चर्याओं के प्रत्याख्यान निरन्तर चल रहे हैं। प्रवचन और प्रतिक्रमण में तीनों स्थानों पर विशाल जनमेदिनी ने पर्वाधिराज पर्युषण पर्व की मंगल आराधना बड़े उत्साह से की। तीनों स्थानों पर कहीं कोई जगह खाली नजर नहीं आई। इससे संघाध्यक्ष सहित सभी कार्यकर्त्ताओं को इस बात का संतोष रहा कि एक या दो जगह प्रवचन होते तो इतनी विशाल जनता को बैठने का स्थान तक सुलभ नहीं होता। तीनों स्थानों पर दया–संवर करने वालों के साथ आगत दर्शनार्थियों के भोजन की व्यवस्था युवारत्न बन्धुओं एवं सेवाभावी श्रावकों के सहयोग से बहुत ही सफलता पूर्वक चल रही है। दया–संवर की साधना के साथ प्रतिक्रमण की विशाल उपस्थिति और उसका नजारा देखते ही बनता था। चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, प्रताप नगर सहित कई उपनगरों में प्रतिक्रमण की व्यवस्था करनी पड़ी। पचरंगी–अष्टरंगी–नवरंगी के सफल आयोजन एवं आडम्बरविहीन तप-साधना में आबाल वृद्ध सबकी रुचि प्रशंसनीय रही।

महासती श्री विवेकप्रभा जी म.सा. का जोधपुर पधारने पर सिटी स्केन करवाया गया और श्रमणोचित उपचार भी किया गया। जोधपुर में करीब महीने भर के औषधोपचार से स्वास्थ्य में सुधार का संकेत मिलने लगा और पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के पूर्व महासती जी का स्वास्थ्य करीब–करीब सामान्य हो गया। सिर दर्द एवं वमन की शिकायत भी उपचार से ठीक हो गई है। अब महासती श्री विवेकप्रभा जी म.सा. के स्वास्थ्य में पूरी तरह सुधार है। शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. के एक दिन चक्कर आने से पाटे पर से गिरने के कारण उनके सीने की हड्डी में क्रेक हो गया था। उठते–बैठते और बोलते समय दर्द बढ़ जाता है, फिर भी शासनप्रभाविका जी म.सा. अपने दृढ़ मनोबल से प्रवचनादि व्यवस्था को बराबर निभाते रहे। महासती श्री चन्द्रकला जी म.सा. ने भी प्रार्थना–प्रवचनादि कार्यक्रम संचालन में अपूर्व सहयोग दिया। चार सतियों में दो के स्वास्थ्य की प्रतिकूलता होते हुए भी धर्म आराधना में नेहरू पार्क क्षेत्र में कोई कमी नहीं रही, यह संतोष का विषय है। शासनप्रभाविका महासतीजी के स्वास्थ्य में सुधार चल रहा है। **सम्पर्क सूत्र**– **1.** श्रीमान सुमेरनाथ जी मोदी, प्रथम "बी" रोड़, धर्मनारायण जी का हत्था, पावटा, जोधपुर–342003, फोन नं. 0291–636763 / 632681, **2.** श्री नरपतराज जी चौपड़ा, सी–82, धर्मनारायण जी का हत्था, पावटा, जोधपुर–342006, फोन नं.0291–545265 / 547462

धनारीकलां–जोधपुर जिलान्तर्गत धनारी श्रद्धा–भक्ति वाला क्षेत्र है। सेवाभावी महासती श्री संतोष कंवर जी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास से धनारीकलां में धर्मध्यान का ठाट लगा हुआ है। महासती श्री मनोहरकंवर जी म.सा., महासती श्री कौशल्याजी म.सा. के प्रवचनों से गांव के जैन जैनेतर सभी ग्रामवासी

प्रभावित हैं। दया–संवर, उपवास–पौषध के साथ बेले–तेले–पांच–आठ–ग्यारह की कई तपश्चर्याएं भावना पूर्वक हुई। ज्ञान–ध्यान सीखने में बहिनों की रुचि विशेष रूप से प्रमोदजन्य है। गांव का शान्त–सौम्य वातावरण महासती मण्डल की संयम-साधना के लिए बहुत अनुकूल है। समीपवर्ती क्षेत्रों के श्रद्धालुओं का आवागमन बराबर चल रहा है। धनारी श्रीसंघ स्वधर्मी वात्सल्य सेवा में सक्रिय है।

भोपालगढ़– शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शान्तिकंवर जी म.सा., महासती श्री जागृतिप्रभा जी म.सा. एवं श्री वृद्धिप्रभा जी म.सा. ठाणा के पावन सान्निध्य में भोपालगढ़वासी धर्माराधन का अच्छा लाभ ले रहे हैं। महासती श्री जागृतिप्रभा जी म.सा., महासती श्री वृद्धिप्रभा जी म.सा. नित्यप्रति प्रवचन कर रहे हैं और भोपालगढ़ के सुज्ञ श्रावक व श्राविकाएं प्रमुदित हैं, श्रावक संघ का सहयोग एवं धर्म-साधना का सुन्दर रूप क्रियोद्धारक भूमि भोपालगढ़ की श्रद्धा-भक्ति का अनुपम उदाहरण कहें तो अतिशयोक्ति नहीं है। दया–संवर, उपवास–पौषध, जप–तप के साथ उपवास, बेले, तेले, पांच, आठ, ग्यारह की तपश्चर्याएं एवं नौ बहिनों के एकान्तर तप की साधना तपाराधन के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धि कही जा सकती है। दिन में प्रतिदिन 2 से 3 बजे तक बहिनों द्वारा शान्तिजाप किया जाता है। शान्तस्वभावी तपस्विनी महासती श्री शांतिकंवर जी म.सा. मध्याह्न में करीब एक घंटा चौपाई का वाचन कर रहे हैं। उनके अठाई तप के उपलक्ष्य में श्रद्धालु भाई–बहनों ने कई तहर के त्याग–प्रत्याख्यान किए। ज्ञान–ध्यान, त्याग–तप और स्वधर्मी वात्सल्य सेवा के साथ भोपालगढ़ का यह चातुर्मास सुखशांतिपूर्वक गतिमान हो रहा है।

तोण्डापुर–महाराष्ट्र के जलगांव जिलान्तर्गत तोंडापुर श्रद्धा-भक्ति वाला क्षेत्र है। मधुर व्याख्यानी महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 7 के सान्निध्य में यहां प्रार्थना–प्रवचन आदि दैनिक कार्यक्रमों के साथ ज्ञानाराधन, तपाराधन, धर्माराधन का अनवरत क्रम बराबर चल रहा है। महासती मण्डल के प्रेरक प्रवचनों का सुफल है कि आबाल वृद्ध सभी धर्म साधना में सक्रिय हैं। व्याख्यात्री महासती श्री उदित प्रभा जी म.सा. ने तप-साधना में अदम्य साहस का परिचय देते हुए मासखमण किया। महासती जी की तप-साधना की अनुमोदना में श्रावक–श्राविकाओं ने त्याग–तप के प्रति और व्रत–प्रत्याख्यानों के प्रति अच्छा उत्साह प्रदर्शित किया। तोंडापुर की श्रद्धा–भक्ति एवं स्वधर्मी वात्सल्य की भावना प्रशंसनीय है।

मणिनगर–अहमदाबाद–तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5 के सान्निध्य में चातुर्मास मणिनगर स्थित स्थानक भवन में ज्ञानाराधन, तपाराधन, धर्माराधन सभी दृष्टियों से बहुत अच्छा चल रहा है। दया–संवर और उपवास–पौषध की पचरंगियों के साथ बेले–तेले–पांच–आठ–ग्यारह एवं बड़ी तपश्चर्याओं में श्रावक–श्राविकाओं का उत्साह धर्म-रुचि का

अनुपम उदाहरण कहा जा सकता है।विशाल जनमेदिनी द्वारा नित्य प्रति प्रवचन श्रवण करने और व्रत-प्रत्याख्यानों की श्रद्धा समर्पित करने में अहमदाबादवासी किसी से पीछे नहीं हैं। महासती श्री समता जी का व्याख्यान भी तेजस्वी है, जो सभी को मंत्र-मुग्ध कर देता है। पर्वाधिराज पर्युषण पर धर्म–ध्यान का अपूर्व ठाट लगा रहा। स्थानीय श्रीसंघ की आवास–भोजन व्यवस्था सराहनीय है। आयम्बिल, उपवास, एकाशन एवं तेले की कड़ियाँ सुचारू रूप से चल रही हैं। प्रत्येक रविवार को बालकों का शिविर व धार्मिक परीक्षा का कार्यक्रम भी चल रहा है। नमस्कार मंत्र का जाप नियमित रूप से चल रहा है। रविवार को दया, पचरंगी का कार्यक्रम भी चालू है।

ताहराबाद (जिला–नासिक)– नासिक जिलान्तर्गत ताहराबाद भक्ति–भावना वाला क्षेत्र है। विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 3 के पावन सान्निध्य में ताहराबाद में ज्ञान–ध्यान, त्याग–तप और साधना–आराधना के विविध कार्यक्रमों में और प्रार्थना–प्रवचन, प्रश्न–चर्चा, प्रतिक्रमण जैसे दैनिक कार्यक्रमों में उत्तरोत्तर वृद्धि चल रही है। पर्वाधिराज पर्युषण में आबाल–वृद्ध सबमें धर्मध्यान के प्रति अच्छा उत्साह रहा। तपश्चर्या में बालक–बालिकाओं, युवक-युवतियों ने भी अच्छी भागीदारी निभाई। सामायिक, प्रतिक्रमण और बोल–थोकड़े सीखंने में ताहराबाद वालों की रुचि प्रशंसनीय है। ताहराबाद मुम्बई–होलनांथा के बीच में स्थित है अतः श्रावक–श्राविकाओं का आवागमन भी बराबर रहता है, पर श्रीसंघ की सेवाभावना में आत्मीयता का रूप प्रमोदजन्य है। प्रतिदिन एकाशन एवं आयम्बिल चल रहे है। कई बहन–भाइयों में पहली बार 9 की तपस्या की। अजैन भाई भी वीतराग वाणी बड़ी तन्मयता से सुनते हैं। दिन में भगवती सूत्र का वाचन चलता है। सामायिक, प्रतिक्रमण एवं थोकड़े सीखने की रुचि प्रशंसनीय है। बहनों में प्रतिदिन नवकार मंत्र का जाप चलता है।

मेड़ता सिटी– व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5 के सान्निध्य में मेड़ता सिटी में चातुर्मासार्थ मंगल-प्रवेश के साथ प्रार्थना-प्रवचन आदि के दैनिक कार्यक्रम अनवरत चल रहे हैं। सुखविपाक सूत्र एवं विक्रमादित्य चरित्र के माध्यम से महासती श्री समर्पिता जी म.सा. एवं व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. के प्रवचन में नित्य–प्रति औसत 125 भाई–बहिनों और पर्वाधिराज पर्युषण पर्व पर औसत 200 की उपस्थिति रही। उपवास–बेले–तेले–चार–पांच–आठ और पन्द्रह तक की कई तपश्चर्याओं के साथ धर्मचक्र, पचरंगी और सप्तरंगी की साधना उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुई। रविवार को सामूहिक दया में युवकों का उत्साह अनुकरणीय है। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व पर अखण्ड शांति जाप का रात–दिन आयोजन एवं रविवार तथा अष्टमी–चतुर्दशी को चातुर्मास से अब तक दो से तीन बजे तक नवकार महामंत्र का जाप बराबर चल रहा है।

मेड़ता सिटी में श्रावकों के एक वर्ग ने प्रारम्भ में उत्तेजना बढ़ाने का

प्रयास भी किया, परन्तु महासती मण्डल की शान्तता एवं श्रावकों की उदारता के कारण चातुर्मास में धर्म–ध्यान अच्छी तरह चल रहा है। स्थानीय श्रीसंघ भक्ति-भावना से लाभान्वित हो रहा है एवं आगत गुरु भाइयों की सेवा में सक्रिय है।

मुकटी (जिला–धुले)– व्याख्यात्री महासती श्री सरलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 3 सुख शान्ति से विराजमान हैं तथा आपकी प्रेरणा से यहां उत्साहपूर्वक धर्माराधन एवं ज्ञानाराधन चल रहा है। एकाशन एवं तेले की कड़ी निरन्तर चल रही हैं। कई बहिनें नियमित एकाशन कर रही हैं। सामायिक, प्रतिक्रमण आदि सीखने वालों का क्रम जारी है। घरों की संख्या 22 है तथा 10 वर्षों बाद चातुर्मास होने से संघ के हर सदस्य में उमंग एवं उत्साह का अच्छा वातावरण है। प्रवचन के समय 9 से 10.30 बजे तक दुकाने बंद रहती हैं। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के समय प्रवचन में अच्छी उपस्थिति तो रही ही, दया–संवर, उपवास–पौषध एवं जप–तप में आबाल–वृद्ध सबने उत्साह से भाग लिया। तपश्चर्या के नित्यप्रति प्रत्याख्यान अनवरत रूप से चल रहे हैं। सामायिक करने वालों की संख्या बढ़ी है। युवक एवं जैनेतर भाई भी प्रवचन सभा का लाभ लेते हैं। जैनेतर भाइयों का तप में अच्छा सहयोग है। युवक मंडल के सदस्यों ने बैण्ड बाजे पर नाचने के प्रत्याख्यान किये हैं। श्री शांतिलाल जी मोतीलाल जी छाजेड़ ने एवं मोहनलाल जी संचालाल जी छाजेड़ ने सजोड़े आजीवन शीलव्रत अंगीकार किये हैं। अभी 9 की तपस्या का क्रम निरन्तर चल रहा है। स्थानीय श्रीसंघ की आवास–भोजन आदि व्यवस्था सराहनीय है। सम्पर्क सूत्र– श्री हिरालाल जी माणकचन्द जी खिंवसरा, पो. मुकटी, जिला– धुलिया (महा.) 424301, फोन नं. 02562–58265।

पाली–मारवाड़– मधुर व्याख्यानी महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा., महासती श्री सुमतिप्रभा जी म.सा., महासती श्री मुदितप्रभा जी म.सा. ठाणा 3 के प्रवचनों की पाली में अपूर्व प्रभावना चल रही है। भारी तादाद में श्रावक–श्राविकाएं नित्यप्रति जिनवाणी श्रवण का लाभ तो ले ही रहे हैं, धर्मचक्र पचरंगियों का वहां ठाट रहा है। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व पर भाइयों में नौरंगी और बहिनों में ग्यारह रंगी होना और उसके पहले सात पचरंगियां होना आदि धर्म-साधना का सुन्दर रूप अनुकरणीय है।

जप–तप में और ज्ञान–ध्यान सीखने में बहिनों और बालिकाओं की रुचि और भावना प्रेरणादायी है। रविवार को सामूहिक दयाव्रत की साधना में भाई–बहिनों का उत्साह प्रशंसनीय है। पाली में जैन समाज में और भी चातुर्मास हैं, लेकिन सुराना मार्केट का यह चातुर्मास धर्म-साधना-आराधना में जन भागीदारी से विशेष रूप से उपलब्धि वाला है। महासती-मण्डल का चातुर्मास संतों के समकक्ष दीप्तिमान हो रहा है। स्थानीय श्रीसंघ की आवास–भोजन आदि की व्यवस्था अनुकरणीय है। सुराना मार्केट स्थानक के समीप आवास–भोजनादि व्यवस्था से आगत श्रीसंघों को एवं श्रद्धालुओं को कहीं

इधर—उधर आना—जाना नहीं पड़ता और उन्हें सत्संग सेवा में पर्याप्त समय सहज सुलभ होता है, जिसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा सुनने को मिल रही है।

गंगापुर सिटी— विदुषी महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 3 सुख शान्ति पूर्वक विराजमान हैं। महासती मण्डल के चातुर्मास प्रवेश के साथ आरम्भ हुए प्रार्थना, प्रवचन, प्रतिक्रमण के कार्यक्रमों के साथ दया—संवर, उपवास—पौषध, धर्मचक्र, पचरंगियों के आयोजनों एवं तपश्चर्याओं का क्रम बराबर उत्तरोत्तर प्रगति कर रहा है। व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा., महासती श्री भाग्यप्रभा जी म.सा. के प्रेरक प्रवचन श्रवण कर पल्लीवाल क्षेत्र के अनेक श्रद्धालु व्रत—नियमों की श्रद्धा समर्पित कर रहे हैं। आजीवन शीलव्रत के दो खन्द हुए हैं। तेले व आयंबिल की लड़ियां चल रही है। कइयों ने चार माह तक रात्रि भोजन त्याग एवं ब्रह्मचर्य व्रत के नियम लिए हैं। जमीकन्द एवं लीलोती त्याग के भी नियम किए हैं। सामायिक—स्वाध्याय और व्यसन मुक्ति की प्रेरणा से उस क्षेत्र में अच्छी जागृति आई है। तपश्चर्या के क्षेत्र में गंगापुर में अच्छा उत्साह है। प्रातः प्रार्थना के समय महासती श्री भाग्यप्रभा जी युवकों को प्रेरणा करती हैं। प्रवचन श्री ज्ञानलता जी एवं चारित्रलता जी फरमाते हैं। रविवार को दोपहर में धार्मिक परीक्षाएँ आयोजित की जाती हैं। धार्मिक संस्कार की प्रेरणा भी की जाती है। युवकों ने सप्त कुव्यसन, गुटखा, जमीकन्द आदि का त्याग किया है। स्थानीय श्रीसंघ की आवास—भोजनादि व्यवस्था सुन्दर है।

जरखोदा (जिला—बून्दी)—व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 3 जरखोदा में सुख-शान्ति पूर्वक विराजमान हैं। महासती मण्डल के चातुर्मास हेतु पधारने के साथ गांव में धर्म जागरणा के प्रति चेतना जागृत हुई वह वस्तुतः प्रेरणादायी है। गांव के सभी जैन परिवारों ने चातुर्मास को दीप्तिमान बनाने के संकल्प के अन्तर्गत ब्रह्मचर्य के नियम सहित अनेक व्रत—प्रत्याख्यान स्वीकार किए व धर्म—ध्यान की जो जाहोजलाली की वह वस्तुतः अनुकरणीय है। प्रार्थना—प्रवचन, प्रश्न—चर्चा, प्रतिक्रमण में जैन—जैनेतर जन-समुदाय की भावना एवं त्याग—तप में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा से जरखोदा में धर्म—ध्यान की अनवरत प्रभावना चल रही है। पोरवाल क्षेत्र के बन्धु महासती मण्डल के श्रीचरणों में पहुंच कर जिनवाणी श्रवण तो करते ही हैं, व्रत—प्रत्याख्यानों में भी अपनी भागीदारी निभा रहे हैं। यहाँ पर पर्युषण में पहली बार आठ दिन प्रतिष्ठान एवं दुकानें बन्द कर श्रावकों ने धर्म—साधना का पूरा लाभ उठाया है। अध्यापकों ने भी छुट्टियाँ लेकर लाभ लिया है। 15 जैन घरों के ग्राम में 77 तेले की तपस्या हुई है। 9 दम्पतियों ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया है। 23 अगस्त से 10 सितम्बर तक चले धार्मिक शिक्षण शिविर में ज्ञानवर्द्धन का क्रम चला है। महासती मण्डल का चातुर्मास जरखोदा श्रीसंघ का नहीं होकर जरखोदा ग्राम और पोरवाल क्षेत्र का आदर्श चातुर्मास साबित हो रहा है। जरखोदा श्रीसंघ का धर्मसाधना का सुन्दर रूप देखने में आया तथा स्वधर्मी वात्सल्य-सेवा की भावना

से आगत बन्धु बहुत प्रभावित हैं।

लासूर स्टेशन– औरंगाबाद जिलान्तर्गत लासूर स्टेशन आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर आदि संत–सतीवृन्द की संयम-साधना से बहुत प्रभावित है। महासती मण्डल के सान्निध्य में लासूर में प्रार्थना–प्रवचन–प्रतिक्रमण आदि दैनिक कार्यक्रमों के साथ नित्य–प्रति व्रत–प्रत्याख्यानों की प्रभावना चल रही है। बालक–बालिकाएँ, युवक–युवतियाँ एवं बुजुर्ग श्रावक–श्राविकाएँ जिनवाणी के रसास्वादन के साथ जप–तप, सामायिक–स्वाध्याय, दया–संवर, उपवास–पौषध एवं छोटी बड़ी तपश्चर्याओं में अग्रणी हैं। स्थानीय श्रीसंघ की अतिथि सेवा अनुकरणीय है।

–अरूण मेहता, महामंत्री, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

२८ जुलाई २००२ को आयोजित परीक्षा का परिणाम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड द्वारा 28 जुलाई 2002, रविवार को आयोजित की गयी कक्षा पहली से दसवीं तक का परीक्षा परिणाम घोषित किया जा चुका है। विभिन्न कक्षाओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान पाने वालों की अस्थायी योग्यता सूची इस प्रकार है–

स्थान	नाम परीक्षार्थी	केन्द्र	प्राप्तांक
	जैन धर्म परिचय		
प्रथम	कु. अल्फा गणपत जी सुराणा	जोधपुर	99
द्वितीय	श्री महावीर प्रसाद उच्छबराज जी जैन	जरखोदा	98.5
तृतीय	सौ. निशा नरेन्द्र जी लूंकड़	कोटा	97
तृतीय	श्री धर्मचन्द फूलचन्द जी जैन	जरखोदा	97
तृतीय	सौ. मीना आशीष जी जैन	अहमदाबाद	97
तृतीय	कु. टीना गौतमचन्द जी भण्डारी	जोधपुर	97
	जैन धर्म प्रवेशिका		
प्रथम	सौ. सरोजा सुरेशजी चोरड़िया	चेन्नई	99
द्वितीय	सौ. सपना संजय जी टाटिया	इगतपुरी वरचीपेट	98
द्वितीय	सौ. मीना राजेन्द्र जी चौपड़ा	अहमदाबाद	98
तृतीय	सौ. सरला जवाहर जी बोरा	चालीसगांव	96
तृतीय	कु. आदर्शना शांतिलाल जी देसरड़ा	निफाड़	96
तृतीय	सौ. संगीता मिलिन्द जी सिसोदिया	चौपड़ा	96
	जैन धर्म प्रथमा		
प्रथम	सौ. सुनिता यशवन्त जी सिंघवी	चेन्नई	99.5
द्वितीय	सौ. संतोषबाई मदनलाल जी सोनिगरा	चेन्नई	99
तृतीय	सौ. अल्का किशोर जी गांधी	भण्डारा	96
	जैन धर्म मध्यमा		
प्रथम	सौ. ज्योति शेखरचन्द जी लोढ़ा	नागपुर	100
द्वितीय	सौ. बसन्ता रतनलाल जी बावेल	चित्तौड़गढ़	98

द्वितीय	श्री लोकेश ज्ञानचन्द जी जैन	जयपुर	98
द्वितीय	सौ. कौशल्या संजय जी सिंघवी	चेन्नई	98
तृतीय	कु. सरिता प्रकाशचन्द जी कोठारी	चेन्नई	97.5

जैन धर्म चन्द्रिका

प्रथम	कु. सपना चंपालाल जी संकलेचा	चेन्नई	93
द्वितीय	श्री नवरत्न पुखराज जी गिड़िया	जोधपुर	92
द्वितीय	सौ. वीणाबाई रिखबचन्द जी मेहता	कोपल(कर्नाटक)	92
तृतीय	सौ. आशा इन्दरचन्द जी गेलड़ा	बोदवड़	88

जैन धर्म विशारद

प्रथम	कु. स्वीटी प्रेमचन्द जी जैन	ब्यावर	97
द्वितीय	कु. मंजु गौतमचन्द जी छाजेड़	भोपालगढ़	93
द्वितीय	सौ. शोभा मदनलाल जी लुणावत	भड़गांव	93
तृतीय	सौ. उषा प्रेमसिंह जी हिंगड़	बैगूं	89

जैन धर्म कोविद

प्रथम	कु. भाग्यश्री नारायण जी चौपड़ा	जोधपुर	99
द्वितीय	सौ. सरोज नरेन्द्र कुमार जी सांड	जयपुर	98
तृतीय	कु. सुरेखा केवलचन्द जी जैन	थांवला	97

जैन धर्म भूषण

प्रथम	सौ. सुभद्रा कांतिलाल जी धारीवाल	पाली	86
द्वितीय	श्री गौतमचन्द चिरंजीलाल जी जैन	बजरिया	85
तृतीय	सौ. युवराज हेमचन्द जी जैन	जयपुर	84
तृतीय	सौ. सरोज विनोद जी सांड	पाली	84

जैन सिद्धान्त प्रभाकर–पूर्वार्द्ध

प्रथम	सौ. चन्दनबाला देवेन्द्र जी चोरड़िया	चेन्नई	92
द्वितीय	श्री विनोद रूपचन्द जी जैन	जयपुर	86
तृतीय	श्री राजेन्द्र कुमार जी सांखला	चेन्नई	85
तृतीय	सौ. किरण प्रकाशचन्द जी कोठारी	बोंदवड़	85

जैन सिद्धान्त प्रभाकर–उत्तरार्द्ध

प्रथम	सौ. कंचन शांतिलाल जी भंसाली	चेन्नई	88
द्वितीय	सौ. मधुबाला जीवनलाल जी ओस्तवाल	नाशिक	84
तृतीय	श्री नितीन प्रकाशचन्द जी कांकरिया	जलगांव	83

देश के 187 केन्द्रों पर आयोजित परीक्षा में कुल 4727 परीक्षार्थियों ने भाग लिया। कक्षावार एवं श्रेणीवार परीक्षा परिणाम इस प्रकार है–

कक्षा	कुल परीक्षार्थी	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	कुल उत्तीर्ण	प्रतिशत
जैन धर्म परिचय (पहली)	2227	504	493	502	1499	67.31
जैन धर्म प्रवेशिका (दूसरी)	1327	449	328	283	1060	79.87
जैन धर्म प्रथमा (तीसरी)	575	165	161	138	464	80.69
जैन धर्म मध्यमा(चौथी)	350	268	52	27	347	99.14

जैन धर्म चन्द्रिका(पांचवी)	79	26	25	20	71	89.98
जैन धर्म विशारद(छठी)	68	22	28	7	57	83.38
जैन धर्म कोविद (सातवीं)	46	25	18	8	44	95.65
जैन धर्म भूषण (आठवीं)	23	8	6	6	20	86.95
जैन सिद्धान्त प्रभाकर– पूर्वार्द्ध(नवमी)	14	5	6	3	14	100.00
जैन सिद्धान्त प्रभाकर– उत्तरार्द्ध (दसवीं)	18	6	6	4	16	88.88
योग	**4727**	**1478**	**1116**	**998**	**3592**	**75.98**

धन्यवाद– उन सभी परीक्षार्थियों को जिन्होंने 4727 की संख्या का कीर्तिमान पूर्ण करने का बोर्ड को सुअवसर प्रदान किया। परीक्षार्थियों ने श्रेष्ठ अंक प्राप्त किये एवं ज्ञानवर्द्धन भी किया।

आभार– केन्द्रअधीक्षक, निरीक्षक, प्रश्नपत्र निर्माता, उत्तरपुस्तिका जांचकर्ता एवं परीक्षा आयोजन में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष सहयोग देने वाले सभी महानुभावों का बोर्ड आभारी है, जिनके भरपूर सहयोग से बोर्ड अपनी परीक्षाएँ विधिवत् सम्पन्न करा सका।

कृतज्ञता–पुस्तक प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देने वाले उदारमना महानुभावों को, पाठ्यसामग्री उपलब्ध कराने वाले विद्वान लेखक–स्वाध्यायियों को, जिनके अभूतपूर्व सहयोग से कक्षा प्रथम से दसवीं तक की पुस्तकें बोर्ड प्रकाशित कर सका।

आह्वान–आगामी परीक्षा **19 जनवरी 2003, रविवार दोपहर 12 से 3 बजे** तक कक्षा प्रथम से आठवीं तक के लिये आयोजित होगी। हमारा आप सभी से आह्वान है कि इस बार परीक्षार्थियों की संख्या 11000 तक पहुंचाने में आप अपना महत्त्वपूर्ण सहयोग एवं प्रेरणा करावें, आप भी परीक्षा में अवश्य भाग लें, ऐसा विनम्र अनुरोध।

विमला मेहता	**नवरतन डागा**	**धर्मचन्द जैन**
संयोजक	सचिव	रजिस्ट्रार

आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा हेतु प्रेरणा

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की संयोजक एवं अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की अध्यक्ष श्रीमती विमला जी मेहता, जोधपुर द्वारा दिनांक 20.9.2002 को तिरूपति में, दिनांक 21 से 23 सितम्बर 2002 तक हैदराबाद में तथा 25.09.2002 को अहमदाबाद में भाई बहिनों की धर्म सभा में आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा संबंधी गतिविधियों एवं श्राविका मण्डल की प्रवृत्तियों की जानकारी देने के साथ ही इनमें सक्रिय रूप से जुड़ने की प्रभावी प्रेरणा की गई। प्रतिक्रिया स्वरूप सबने 19 जनवरी 2003 की परीक्षा में जुड़ने का संकल्प व्यक्त किया।

–धर्मचन्द जैन, रजिस्ट्रार

कोटा खुला विश्वविद्यालय अब भगवान महावीर के नाम पर

कोटा खुला विश्वविद्यालय का नाम अब 'वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा' होगा। राजस्थान विद्यानसभा ने 30 अगस्त 2002 को ध्वनिमत से नाम परिवर्तन का विधेयक पारित कर दिया। उच्च शिक्षा राज्यमंत्री शैलेन्द्र जोशी ने विधेयक के उद्देश्य व कारण स्पष्ट करते हुए कहा कि तीर्थंकर भगवान महावीर की 2600वीं जयन्ती मनाने व उनकी स्मृति को चिरस्थायी रखने की दृष्टि से नाम परिवर्तन किया जा रहा है। इससे पूर्व सदन ने इस विधेयक को जनमत जानने के लिए परिचालित करने का प्रस्ताव ध्वनिमत से अस्वीकार कर दिया। **–राजस्थान पत्रिका, 31 अगस्त 2002**

आचार्य श्री आनन्दऋषि जी पर डाक टिकट

भारत सरकार ने आचार्य श्री आनन्दऋषि जी पर डाक टिकट का प्रकाशन किया है।

करुणा क्लबों का विस्तार

तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, नई दिल्ली, राजस्थान एवं उत्तरप्रदेश में कुल 412 करुणा क्लब खुल चुके हैं तथा विस्तार का कार्य निरन्तर प्रगति पर है। अहिंसा, करुणा, पर्यावरण की रक्षा, शाकाहार आदि मूल्यों के प्रचार में यह एक प्रभावक कार्यक्रम सिद्ध हुआ है। **–दुलीचन्द जैन, चेन्नई**

संक्षिप्त-समाचार

सरदारशहर – श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, सरदारशहर द्वारा आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री रामलालजी म.सा. आदि ठाणा 32 के पावन सान्निध्य में 12 दिवसीय मुमुक्षु शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में साध्वाचार, जैनदर्शन एवं भाषा ज्ञान का प्रशिक्षण दिया गया। शिविर का संचालन श्री महेश जी नाहटा, नगरी ने किया।

इसी प्रकार यहां पर युवाओं में संस्कार–जागृति हेतु युवा दिशाबोध शिविर आयोजित किया गया। आचार्यश्री ने माता–पिता एवं दीन–दुःखियों की सेवा, ज्ञान–दर्शन–चारित्र के विकास, स्वाध्याय व व्यसनमुक्ति के कार्यों में आगे आने हेतु नवयुवकों का आह्वान किया। युवकों को शिविर में नैतिक एवं चारित्रिक जीवन जीने की प्रेरणा मिली।

जयपुर– अपभ्रंश साहित्य अकादमी, दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी, सवाईरामसिंह रोड़, जयपुर द्वारा 1 जनवरी 2003 से 'पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' का 11वाँ सत्र प्रारम्भ किया जा रहा है। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुंचाने की अन्तिम तिथि 15 अक्टूबर 2002 है। इसी प्रकार उपर्युक्त पते पर स्थित संस्था 'जैन विद्या संस्थान' द्वारा 'पत्राचार जैन धर्म–दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट' पाठ्यक्रम हेतु 30 अक्टूबर 2002 तक आवेदन

पत्र आमन्त्रित है। इस पाठ्यक्रम का सत्र 1 जनवरी से 31 दिसम्बर 2003 तक रहेगा। **–डॉ. कमलचन्द सोगाणी, संयोजक, फोन नं.0141–382847**

बैंगलोर–आचार्य श्री नानेश की कृति 'जिणधम्मो' पर खुली पुस्तक परीक्षा का आयोजन देश के विभिन्न केन्द्रों पर 24 अक्टूबर 2002 को अपराह्न 1 से 4 बजे तक किया जा रहा है। कुल 100 अंकों के प्रश्नपत्र में सभी प्रश्न वस्तुनिष्ठ रहेंगे। प्रथम पाँच पुरस्कार 5000/–, 4000/–, 3000/–, 2000/– एवं 1000/– रूपये के होंगे। **– अशोक नागौरी**

अशोक नगर (म.प्र.)– 48 वर्षों के पश्चात् सम्पन्न हो रहे चातुर्मास में तपस्या, त्याग एवं धर्मक्रियाओं का ठाट लगा हुआ है। यहाँ पुनीता जी म.सा. एवं प्रेक्षाजी म.सा. विराजित हैं।**– डॉ. प्रदीप कुमार सुराना**

अहमदाबाद– श्रमणसंघीय महामंत्री श्री सौभाग्यमुनि जी 'कुमुद' एवं उपप्रवर्तक श्री विनयमुनिजी 'वागीश' आदि ठाणा 5 के सान्निध्य में उपाध्यायश्री कन्हैयालाल जी 'कमल' द्वारा सम्पादित गणितानुयोग भाग–2 का लोकार्पण श्री बच्चुभाई बलदेवभाई पटेल ने किया। उपाध्याय श्री की स्मृति में चारों अनुयोगों के हिन्दी सेट एवं गुजराती सेट अर्धमूल्य में दीपावली तक देने का निर्णय लिया गया है।

दुर्ग– यहाँ छत्तीसगढ़ स्तरीय स्वाध्यायियों का अभिनन्दन समारोह आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि श्री सौभाग्यमल जी कोटड़िया ने समयदानी स्वाध्यायियों के जीवन से प्रेरणा लेने की बात कही। अध्यक्ष श्री गौतम जी पारख ने व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक जीवन में सदैव गुणग्राही बनने का आह्वान किया। श्री श्वेताम्बर श्री संघ दुर्ग एवं सुन्दरबाई सांखला की ओर से स्वाध्यायियों को अभिनन्दन पत्र, स्मृति चिह्न, पुरस्कार एवं साहित्य प्रदान किया गया।**– महेश नाहटा**

जयपुर– महामहिम उपराष्ट्रपति माननीय श्री भैरोंसिंह जी शेखावत ने सम्पूर्ण औपचारिकताओं को छोड़कर मासखमण तप की सम्पूर्ति हेतु लालभवन में आचार्य श्री सुदर्शनलाल जी म.सा. के पास प्रत्याख्यान हेतु जा रही तपस्विनी श्राविका श्रीमती सुनीता जी बैद(धर्मपत्नी श्री विमल जी बैद एवं पुत्रवधू श्री नेमीचन्द जी बैद) की कुशल क्षेम पूछी एवं माला अर्पण कर अभिनन्दन किया। 15 मिनट तक वरघोड़े के साथ रहे तथा उपस्थित लोगों को पर्युषण पर्व की बधाइयां दी। श्री नेमीचन्द जी बैद अ.भा. श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेस के समर्पित एवं निष्ठावान कार्यकर्ता तथा धर्मनिष्ठ श्रावक हैं।

–उमरावमल चोरड़िया, अध्यक्ष

चेन्नई– आचार्य श्री आनन्दऋषि जी महाराज की जन्म–जयन्ती के उपलक्ष्य में आचार्य आनन्दऋषिजी सेण्टीनरी ट्रस्ट द्वारा 130 नेत्रों का लैंस आपरेशन कराया गया।**– रिखबचन्द लोढ़ा, मंत्री**

सागर(म.प्र.)– 18 से 27 अक्टूबर 2002 तक एक निःशुल्क प्राकृतिक चिकित्सा शिविर देवास जिले में लगाया जा रहा है। सम्पर्क सूत्र– डॉ. रेखा जैन, प्राकृतिक चिकित्सालय, भाग्योदय तीर्थ, सागर(म.प्र.) फोन नं. 07582–46071

(घर) 46671(ऑ) मोबाइल–098262–26629 सागर में एक माह 15 नवम्बर से 15 दिसम्बर तक प्राकृतिक चिकित्सा का विशेष प्रशिक्षण दिया जाएगा।

बधाई / चुनाव

सवाईमाधोपुर–केन्द्रीय दूरसंचार मंत्री श्री प्रमोद महाजन ने राज्यसभा सांसद की अभिशंषा पर श्री महावीर जैन शिक्षण संस्थान के सदस्य श्री विनोद जैन को जिला दूरसंचार सलाहकार समिति का सदस्य मनोनीत किया है। उनका कार्यकाल 31 जुलाई 2004 तक रहेगा। श्री जैन कई सामाजिक एवं राजनैतिक पदों पर कार्यरत हैं।–**सुबाहु जैन**

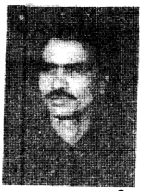

जयपुर– धर्मनिष्ठ श्री रूपचन्द जैन, वरिष्ठ दूरसंचार प्रचालक (तार), को उत्कृष्ट सेवाओं के लिए भारत संचार निगम लिमिटेड ने 'भारत संचार सारथी वर्ष2002' पुरस्कार से सम्मानित किया। उन्हें यह सम्मान 15 अगस्त 2002 को 11 हजार रूपये के चैक एवं स्मृतिचिह्न के साथ दिया गया। श्री जैन समय के पाबन्द, टेलीप्रिण्टर के कुशल प्रचालक एवं समर्पित कर्मचारी हैं।

जोधपुर– राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय राजमहल, जोधपुर की संस्कृत व्याख्याता एवं एन.सी.सी. अधिकारी श्रीमती पद्मा जी जैन (पुत्रवधू श्रीमती राणकंवर एवं श्री बलवन्तराज जी मेहता) को मानव संसाधन विकास मन्त्रालय द्वारा संचालित जन शिक्षण संस्थान नें उनकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिए शिक्षक दिवस पर सम्मानित किया है। शाला परिवार ने पद्मा जी को निष्काम कर्मयोगिनी कहकर स्वागत–सम्मान दिया। श्रीमती जैन श्री जैन रत्न हितैषी श्राविका संघ की सक्रिय एवं समर्पित सदस्या हैं।

श्रद्धाञ्जलि

तपस्वी श्री राजमल जी का देहावसान

अलीगढ़(टोंक) राज.–तपस्वी एवं दृढ़ मनोबली सुश्रावक श्री राजमल जी जैन सुपुत्र स्व. श्री मोतीलाल जी जैन का मुम्बई में 40वें उपवास के दिन भाद्रपद कृष्णा चतुर्दशी 6 सितम्बर 2002 को आकस्मिक देहावसान हो गया। वे 75वर्ष के थे तथा मुम्बई में आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के पावन सान्निध्य में रहकर तप-साधना कर रहे थे। कृशकाय श्री राजमल जी को श्रावक वर्ग ने तप आगे न बढ़ाने का निवेदन किया, किन्तु उन्होंने जल का भी त्याग कर सम्वत्सरी के पूर्व पारणा करने का निषेध कर दिया और मोक्ष का पथ चुन लिया। आपकी तपसाधना के समय सेवाभावी सुश्रावक श्री देवेन्द्र जी ढड्ढा, मुम्बई ने प्रतिक्रमण, मल–मूत्र आदि सर्व प्रकार की सेवा का आदर्श उपस्थित किया। श्री राजमल जी ने गतवर्ष अलीगढ़ ग्राम में 56 दिवसीय तप

कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया था। उसके पूर्व आप 2 मासखमण एवं 27 दिन की तपस्या भी कर चुके थे। आपने अपनी पत्नी के देहावसान के पश्चात् सन् 1991 से सम्पूर्ण जीवन धर्म–साधना में लगा दिया था। आप एक थैले में ही अपनी एक ड्रेस, आसन, बर्तन आदि रखते थे। 56 दिवसीय तप के पारणक के कुछ माह पश्चात् आपने बेले–बेले पारणा प्रारम्भ कर दिया था। आप अधिकतर समय साधु के समान निरारम्भी जीवन ही जीते थे। आपकी माता श्रीमती मांगीबाई प्रतिदिन पाँच सामायिक किए बिना जल भी ग्रहण नहीं करती थी। आप चार पुत्रियों का भरापूरा परिवार छोड़ गए हैं। जिनवाणी के सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन के आप बड़े पिताजी थे।

बालचन्द जी छाजेड़ का संथारापूर्वक स्वर्गगमन

मुकटी (महाराष्ट्र)–भूतपूर्व संघपति सुश्रावक श्री बालचन्द जी केवलचन्द जी छाजेड़ ने 7 सितम्बर 2002 को प्रातः संथारापूर्वक नश्वर देह का त्याग कर दिया। आपने 30 अगस्त 2002 को रत्नवंशीय आचार्य श्री हीराचन्द जी म.सा. की आज्ञानुवर्ती महासती श्री सरलेशप्रभा जी म.सा. से परिवारजनों के समक्ष सजगतापूर्वक स्वेच्छा से यावज्जीवन तिविहार संथारा स्वीकार किया।

महासती जी उन्हें अस्वस्थ दशा में मांगलिक श्रवण कराने पधारती थी। संथारे के दूसरे दिन आपका लकवा ठीक हो गया। उठकर बैठने लगे, बोलने की शक्ति आ गयी। तीसरे दिन के पश्चात् उनके मन में केश–लुंचन का भाव प्रकट होने लगा तथा आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के नाम का स्मरण करने लगे। आठ दिनों तक आचार्य श्री का नाम उनकी जबान पर ही था। स्वयं भजन गाते तथा सतियां जी म.सा. के पीछे–पीछे पाठ दोहराने लगे। दर्शनार्थियों का आवागमन बना हुआ था तथा उन्हें आप सामायिक की प्रेरणा कर क्षमायाचना करते थे। फिर अचानक शरीर में शिथिलता आई। संथारे के नवमें दिन प्रातः प्रतिक्रमण, भक्तामर स्तोत्र एवं प्रार्थना के अनन्तर उन्होंने नश्वर देह को छोड़ दिया। धर्म एवं तप का प्रभाव देखकर सभी लोग अचम्भित थे। उल्लेखनीय है कि छाजेड़ सा को कुछ समय पूर्व ही 10 अगस्त 2002 को दिल का दौरा पड़ा था। वर्षों तक संघपति रहे श्री बालचन्द जी का राजनीतिक क्षेत्र में भी अच्छा वर्चस्व था। श्रद्धांजलि स्वरूप 8 सितम्बर को स्थानक भवन में आपका गुणगान किया गया।

पीपाड़ सिटी– श्रद्धाशील सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती पतासीबाई धर्मपत्नी स्व. श्री मोहनलाल जी बोहरा का 7 सितम्बर 2002 को सायं 7 बजे स्वर्गवास हो गया। आप संघसेवी सुश्राविका थी। आचार्य श्री एवं सन्त–सतियों के रतकूड़िया पधारने पर आप भक्ति भावना से सत्संग–सेवा और सन्त–समागम का लाभ प्राप्त करती थी। विगत 25 वर्षों से रात्रि चौविहार त्याग के

साथ वे नित्य प्रति पोरसी के प्रत्याख्यान करती थी। सामायिक, स्तवन–भजन

आदि में उनकी विशेष रुचि रहती थी। पीपाड़ पधारने के पश्चात् उनकी धर्म–साधना उत्तरोत्तर बढ़ती रही।

पांढरकवड़ा– सुश्राविका श्रीमती उमरावबाई जी मूथा धर्मपत्नी श्री नेमीचन्द जी मूथा का 80 वर्ष की आयु में 24 अगस्त 2002 को संथारापूर्वक निधन हो गया। आप धर्मपराण, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं त्यागी तपस्विनी श्राविका थीं। आपका जीवन सरल एवं सादगीमय था। आप प्रतिदिन सामायिक–स्वाध्याय करती थी।

नसीराबाद– सुश्रावक श्री चांदमल जी रांका का 75 वर्ष की अवस्था में 30 अगस्त 2002 को देहावसान हो गया। आप सामायिक एवं स्वाध्याय में गहरी रुचि रखते थे। आप मिलनसान एवं सरल प्रकृति के श्रावक थे।

–ताराचन्द जैन, अध्यक्ष

वर्धा (महाराष्ट्र)– मृदुभाषी समाजरत्न श्री मूलचन्द जी वैद का संथारापूर्वक स्वर्गवास हो गया। आप विदर्भ में ही नहीं, अपितु राज्यभर में अपनी सेवाभावी वृत्ति के लिए प्रसिद्ध थे। सन्त–सतियों की सेवा में तत्पर रहते थे। आप अम्मापिया की उपाधि से विभूषित थे। दूसरों का दुःख दूर करने में ही आपको विशेष आनन्द आता था।

जयपुर– धर्मपरायण सुश्राविका श्रीमती शान्ति जी जैन का 14 सितम्बर 2002 को निधन हो गया। आप सरलस्वभावी, धर्मनिष्ठ एवं सेवाभावी श्राविका थी।

पाली मारवाड़– दृढ़धर्मी सुश्राविका श्रीमती पानीबाई धर्मपत्नी सुश्रावक स्व. श्री हस्तीमल जी सुराना का 1 सितम्बर 2002 को देहावसान हो गया। सेठानी जी धर्मनिष्ठ, संघ–सेवी एवं सुज्ञ श्राविका थी। सामायिक–स्वाध्याय, दया– संवर, उपवास–पौषध एवं भजन–स्मरण में उनकी सदा भावना रहती थी। पाली श्रीसंघ की यशकीर्ति में सुराना परिवार का योगदान अविस्मरणीय है। आप दृढ़धर्मी श्राविका होने के साथ वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता एवं मन की निष्कपटता से सम्पन्न थी। आप उदारमना, गुणग्राही, संघ-समाज हित चिन्तिका थी। संघ हित में उनका योगदान अनुकरणीय है।

जोधपुर–जैन समाज के गौरव, सफल उद्योगपति एवं कर्मठ व्यक्तित्व श्री पारसमल जी भंसाली का 26 सितम्बर 2002 को 61 वर्ष की वय में मुम्बई में आकस्मिक निधन हो गया। वे श्री जैन श्वेताम्बर नाकोड़ा पार्श्वनाथ तीर्थ के अध्यक्ष थे। उनमें नेतृत्व की अद्भुत क्षमता थी तथा निर्भीक एवं कर्मशील श्रावक थे। आप मारवाड़ चैम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्री के भी अध्यक्ष पद पर सुशोभित थे। वे कई सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं से जुड़े हुए थे।

छोटी कसरावद– धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्री केशरीमल जी माडा जैन

का आत्मचिन्तन पूर्वक 74 वर्ष की उम्र में 16 सितम्बर 2002 को समाधिमरण हो गया। आपने अपने अन्तिम समय में व्रत–प्रत्याख्यान महासती श्री शान्ताकुंवर जी म.सा. के मुखारविन्द से ग्रहण किए। शोक सभा में अनेक संघों की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित की गई।–**लक्ष्मीचन्द जैन**

भोपाल–धर्मपरायण श्राविका श्रीमती सरला जी नाहर (धर्मपत्नी स्व. श्री

मानिकलाल जी एवं पुत्रवधू स्व. श्री रतनलाल जी नाहर) बरेली वालों का 18 सितम्बर 2002 को सागारी संथारापूर्वक स्वर्गवास हो गया। आचार्यभगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म. सा., आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. एवं उनके आज्ञानुवर्ती सन्त–सतियों के प्रति आपकी अगाध आस्था एवं श्रद्धा– भक्ति थी। शिक्षा, धर्म, चिकित्सा एवं समाज के क्षेत्र में आपका उल्लेखनीय योगदान रहा। आप मृदुभाषी, व्यवहारकुशल एवं धर्मनिष्ठ उदारमना श्राविका थी। – **विजय नाहर**

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ

1. पाठकों को सूचित किया जाता है कि जिनवाणी का 'जैनागम साहित्य विशेषांक' जैन वाङ्मय की अमूल्य धरोहर है। जिन पाठकों के पास यह विशेषांक अतिरिक्त हो या काम नहीं आ रहा हो, वे इसे स्थानक, पुस्तकालय आदि में जमा करा सकते हैं। जयपुर एवं जोधपुर के पाठक निम्नांकित स्थानों पर जमा करा सकते हैं–
   - स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर (फोन नं. 624891)
   - सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार जयपुर (फोन नं. 565997)

   अन्य स्थानों के महानुभाव सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर के पते पर सम्पर्क स्थापित करें।

2. पता–परिवर्तन या पता सही कराने संबंधी सूचना सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर को प्रेषित करें। सूचना भेजते समय अपनी आजीवन सदस्यता संख्या अवश्य लिखें।

3. विशेष प्रसंगों पर जिनवाणी को अपना योगदान अवश्य दें। ड्राफ्ट 'जिनवाणी, जयपुर' के नाम से सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर को प्रेषित करें।

–प्रकाशचन्द डागा

मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

500/-रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

8900 Shri T.G.Mangilal Ji Chajer, Chennai (T.N.)
8901 श्री जवाहरलाल जी उदयलाल जी कोठारी, अजमेर (राज.)
8902 श्री गौतमचन्द जी चौपड़ा, जोधपुर (राज.)
8903 Shri R. Kamaleshchand Ji Kothari (Jain) Calicut (Kerala)
8904 श्री पीयूष जी गोलेछा, जयपुर (राज.)
8905 Shri Deepak M. Golechha Ji, Bhayandar (East), Mumbai (M.S.)
8906 श्री आस्तिक जी पारख, अजमेर (राज.)
8907 श्री कंवरलाल जी सांखला, बालकेश्वर, मुम्बई (महा.)
8908 श्री बसंत कुमार जी जैन, भाईन्दर (पश्चिम), मुम्बई (महा.)
8909 श्री पूनमचन्द जी पीतलिया, कुर्ला(पूर्व), मुम्बई (महा.)
8910 Shri Umang Ji Mohnot, Mumbai (M.S.)
8911 Shri Kewalchand Ji Kankaria, Kolkata (W.B.)
8912 Shri S.Sunil Ji Bagmar (Jain), Bolarum, Secunderabad (A.P.)
8913 Shri Shantilal Kishorchand Bagmar, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8914 Shri Mohanlal Vijaykumar Surana, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8915 Shri Shailender Ji Bagmar, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8916 Shri Anand Swroop Ji Bohra, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8917 Shri G.B. Surana, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8918 Shri Rikhabchand Ji Ajit Ji Surana, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8919 Shri M.Prakashchand Bagmar(Jain), Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8920 Shri Dharamchand Sumtilal Surana, Bolarum, Secundarabad (A.P.)
8921 Shri Rajkumar Ji Bohadia, Hyderabad (A.P.)

300/-रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

8896 श्री सीम्स हॉस्पिटल, नागपुर (महा.)
8897 श्री गजेन्द्र दादा पाण्डे जी, नागपुर (महा.)
8898 श्री रामकृष्ण जी पोद्दार, नागपुर (महा.)
8899 श्री सुरेश एम. पारेख जी, नागपुर (महा.)

जिनवाणी को साभार-प्राप्त

2100/– श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर, श्रीमती मोहनी देवी एवं श्री महावीरचन्द जी बाफना द्वारा पालासनी में श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. के मुखारविन्द से सजोड़े शीलव्रत ग्रहण करने की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

1101/– श्री महेन्द्र कुमार जी ललित कुमार जी गोलेच्छा, ब्यावर, पूज्य पिताजी स्व. श्री मिट्ठालाल जी गोलेछा सुपुत्र स्व. श्री मांगीलाल जी गोलेछा (गिरीवाले) की प्रथम पुण्य तिथि भादवा सुदी 15 संवत् 2059 पर जिनवाणी को भेंट।

1101/– श्रीमती मन्जु जी धारीवाल, श्रीमान संदीप जी धारीवाल, जोधपुर, स्व. श्री नरेन्द्रराज जी धारीवाल पुत्र श्री मूलराज जी धारीवाल की द्वितीय पुण्यतिथि के अवसर पर जिनवाणी को भेंट।

1101/– श्री पारसराज जी चतर मेहता, जोधपुर, पुत्रवधू श्रीमती सरोज जी मेहता धर्मपत्नी

श्री अजितराज जी मेहता के कोलकाता में अठाई की तपस्या शांतिपूर्वक सम्पन्न होने की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

1000/– श्री श्रीकृष्णमल जी लोढ़ा, जोधपुर, धर्मपत्नी श्रीमती उगमकंवर जी लोढ़ा की आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के मुम्बई चातुर्मास में अठाई की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

501/– श्री एस. जवरीलाल जी जैन, पल्लीपेठ (तमि.), पर्वाधिराज पर्युषण पर्व पर जोधपुर स्वाध्याय संघ से श्रावकजी पधारे। तपस्या का धर्म–ध्यान का ठाट रहा उसके उपलक्ष्य में जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

501/– श्री गणपतलाल जी मनोजकुमार जी जैन, बजरिया (सवाईमाधोपुर), पौत्र नमन जैन पौत्री कु. खुशी द्वारा गुरु आम्नाय स्वीकार करने एवं आचार्य श्री और सन्तवृन्द के दर्शनों की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

501/– श्री धर्मेन्द्र कुमार जी जैन (चपलोद), जयपुर, पूज्य पिताजी श्री प्रेमचन्द जी जैन (चपलोद) की पालासनी में अठाई की तपस्या एवं संतवृन्द के दर्शनों की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

501/– श्री हस्तीमल जी मूलचन्द जी बोहरा(रतकुडिया वाले), पीपाड़ शहर, पूज्य् माताश्री श्रीमती पतासी बाई पत्नी श्री मोहनलाल जी बोहरा की पुण्य स्मृति में सप्रेम भेंट।

500/– मैसर्स सम्पतलाल एण्ड ब्रदर्स,गोरखपुर (जबलपुर) की ओर से जिनवाणी को भेंट।

500/– श्री भंवरलाल जी डांगी, सुपौत्र विकास डांगी की धर्मपत्नी श्रीमती अल्पना जी डांगी की अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

500/– श्री कैलाशचन्द जी लोढ़ा, जयपुर, सुपौत्र श्री अरिहन्त (सुपुत्र श्री रंजनजी लोढ़ा) के जन्मोत्सव पर जिनवाणी को भेंट।

500/– श्री घेवरचन्द जी नाहर, भोपाल, जिनवाणी के जैनागम विशेषांक के प्रकाशन के उपलक्ष्य में जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

500/– श्री सुबोध कुमार जी चोरड़िया एवं उनका परिवार, श्रीमती अनिता जी चोरड़िया (धर्मपत्नी श्री सुबोध कुमार जी चोरड़िया) की अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

300/– श्री पारसमल जी जैन, नागपुर की ओर से जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

251/– श्री धनराज जी लोढ़ा (हीरादेसर वाले) कानपुर, श्री लाडकंवर जी धर्मपत्नी श्री धनराज जी लोढ़ा के वर्षीतप के पारणे के उपलक्ष्य में जिनवाणी को सप्रेम भेंट।

251/– श्री धनराज जी लोढ़ा (हीरादेसर वाले), कानपुर, आचार्यप्रवर एवं संतवृन्द के दर्शन करने की खुशी में एवं पौत्र के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

251/– श्री अविनाश जी मेहता पुत्र श्री अरूण कुमार जी मेहता, नई दिल्ली, 30 सितम्बर को जन्मदिवस की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

251/– तपस्वी श्रीमान राजमल जी जैन, अलीगढ़ रामपुरा का मुम्बई में तपस्या के 40वें दिन देहावसान होने पर उनकी पुण्यस्मृति में परिवारजनों की ओर से भेंट।

250/– श्री रतनलाल जी बच्छराज जी फूलफगर, फतेहपुर, पूज्य आचार्यप्रवर एवं सन्तवृन्द के दर्शनों की खुशी में जिनवाणी को भेंट।

201/– गुप्त दान, चौथ का बरवाड़ा।

200/– श्रीमती लीला देवी धर्मपत्नी श्री मांगीलाल जी कटारिया, पीपाड़ सिटी, 31 की तपस्या के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

151/– श्री सम्पतराज जी जैन, पालासनी, श्रद्धेय गौतममुनि जी म.सा., तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. के पालासनी चातुर्मास के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

101/– श्री प्रभुदयाल जी श्रीमती तारादेवी जी जैन, जयपुर, श्री दिनेशचन्द जी के पुत्ररत्न के जन्मदिवसोत्सव पर जिनवाणी को भेंट।

101/– श्रीमती मोहनीबाई जी लुणिया धर्मपत्नी स्व. श्री बाघमल जी, जोधपुर, अपनी प्रपौत्री सुश्री वर्षा लुणिया के अठाई तप के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

101/– श्री पारसमल जी बरड़िया, पालासनी, श्रद्धेय गौतममुनि जी म.सा., तपस्वी श्री प्रकाशमुनि जी म.सा. के पालासनी चातुर्मास के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

100/– श्री उमरावमल जी चोरड़िया, जयपुर, श्री नेमीचन्द जी वैद की पुत्रवधू श्रीमती सुनीता जी वैद (धर्मपत्नी श्री विमल जी वैद) के मासखमण की तपस्या के उपलक्ष्य में जिनवाणी को भेंट।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार-प्राप्त

500/– श्री प्रेमचन्द सा बेताला, श्री मुकमचन्द जी मेहता, श्री रामलाल जी मेहता, श्री ओमप्रकाश जी मेहता, इन्दौर, जोधपुर में साध्वी मण्डल के दर्शनों की खुशी में।

60/– श्री जौहरीमल जी छाजेड़, जोधपुर, पर्युषण पर्वाराधना हेतु ग्राम आगोलाई, जिला–जोधपुर जाने खुशी में।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल साभार-प्राप्त

1100/– श्री रायचन्द जी हीरावत, मुम्बई, स्वयं की अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को सप्रेम भेंट।

251/– श्री विजेन्द्र जी जैन सुपुत्र श्री हरिप्रसाद जी जैन, मुम्बई, नौ उपवास की तपस्या के उपलक्ष्य में सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल को सप्रेम भेंट।

साहित्य प्रकाशन हेतु साभार-प्राप्त

10500/–श्री छोगालाल जी बसराज जी बागमार, अहमदाबाद (गुजरात), मण्डल द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'रत्नवंश के धर्माचार्य' के प्रकाशन हेतु सप्रेम भेंट।

10500/–श्री अजयराज जी किशनचन्द जी मेहता, अहमदाबाद(गुजरात), मण्डल द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'रत्नवंश के धर्माचार्य' के प्रकाशन हेतु सप्रेम भेंट।

वृद्ध की शिक्षा

प्रकाश गुन्देचा

सुबह पौ फटते वक्त धुंधलके में एक वृद्ध अपनी लकड़ी के सहारे सड़क पर जा रहा था। उस समय सामने से एक युवक बढ़ा चला आ रहा था। धुन ही धुन में चलता हुआ वह उस वृद्ध से टकरा गया। टकराने वाला युवक सशक्त, समर्थ एवं सबल था। आवेश में उसने उस वृद्ध के गाल पर एक थप्पड़ मार दी।

मानो कुछ भी नहीं हुआ हो, उस भाव से वृद्ध ने हाथ जोड़ कर कहा–"क्षमा करें, कदाचित् आपको यह ज्ञात नहीं होगा कि मैं अन्धा हूँ। आपको कहीं चोट तो नहीं लगी न?"

वृद्ध के इन शब्दों से युवक के हृदय पटल पर अद्भुत प्रभाव हुआ। वह युवक उस वृद्ध के चरण पकड़कर रोने लगा, "क्षमा तो मुझे मांगनी चाहिये, बाबा! शान्ति की बातें तो मैं अनेक सुन चुका हूँ और दिखावटी शक्ति रखने वाले भी मैं अनेक देख चुका हूँ, परन्तु शान्ति रखने में आपने तो सबको मात कर दिया।"

वृद्ध ने अपने उत्तम आचरण से उस युवक को उत्तम आचरण का बोध करा दिया।

–जालोरी गेट के अन्दर, जोधपुर (राज.)

हमारी प्रार्थना के केन्द्र में यदि वीतराग होंगे तो निश्चित रूप से हमारी मनोवृत्तियों में प्रशस्तता और उच्च स्थिति आयेगी।

-आचार्य श्री हस्ती

With Best Compliments From :

JIN GEMS

DIAMONDS, PRECIOUS & SEMI PRECIOUS STONES

12th Floor, Flat 'C'
Mass Resources Dev. Bldg.
12, Humphrey's Avenue
T.S.T. Kowloon, Hongkong
✆ 23671373, Fax : 23671511
MOBILE : 94327311, 92594051
E-mail : jingems@ctimail.com

Rajendra Daga

JAI MAHAVEER JAI GURU HASTI

With Best Compliments From :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

GURU HASTI GOLD PALACE

No. 5, CAR STREET, POONAMALLEE
CHENNAI-600 056
PHONE : 6272609

BANKERS : PHONE / 6272906

No. 5 A, CAR STREET,
POONAMALLEE
CHENNAI-600 056

Gurudev

SURANA

Financial Corporation (India) Limited

Group of Surana

Since 1971

A Multi Faceted Finance Company
With Fraternity Feel, Holding Hands
With Customers in Their Success

Just Contact For

- **Hire Purchase**
- **Leasing**
- **Bills Discounting**
- **Foreign Exchange**

Invites Deposits from Public

Call

Phone : 8525596 (6 Lines) Fax : 044-8520587
Internet ID : suranaco@md3.vsnl.net.in
Sprint E-mail ID : surana.chh@rmd.sprintrpg.ems.vsnl.net.in
Regd Cum.Corp. H.O.: No. 16, Whites Road,. II Floor,
Royapettah, Chennai - 600 014

Branches :

☆ Bangalore ☆ Coimbatore ☆ Ernakulam ☆
☆ Kollidam ☆ New Delhi ☆

शान्ति और समता के लिए न्याय-नीतिपूर्वक धर्म का आचरण ही श्रेयस्कर है।

''आचार्य श्री हस्ती''

With Best Compliments From :

EVEREST GEMS LTD.

12-A-2, CHINA INSURANCE BUILDING,
48, CAMERON ROAD,
T.S.T. KOWLOON
HONG-KONG

TEL : 23681199
FAX : 23671357

Director : Sunil Lunawat
Rajesh Kothari

With Best Compliments From :

धन रोग और शोक दोनों का घर है,
जबकि धर्म रोग और शोक दोनों को
काटने वाला है।
- आचार्य श्री हस्ती

HIMA GEMS

14-A, KOK-PAH MANSION
58-60, CAMERON ROAD,
T.S.T. KOWLOON
HONG-KONG

Director
HEMANT SANCHETI

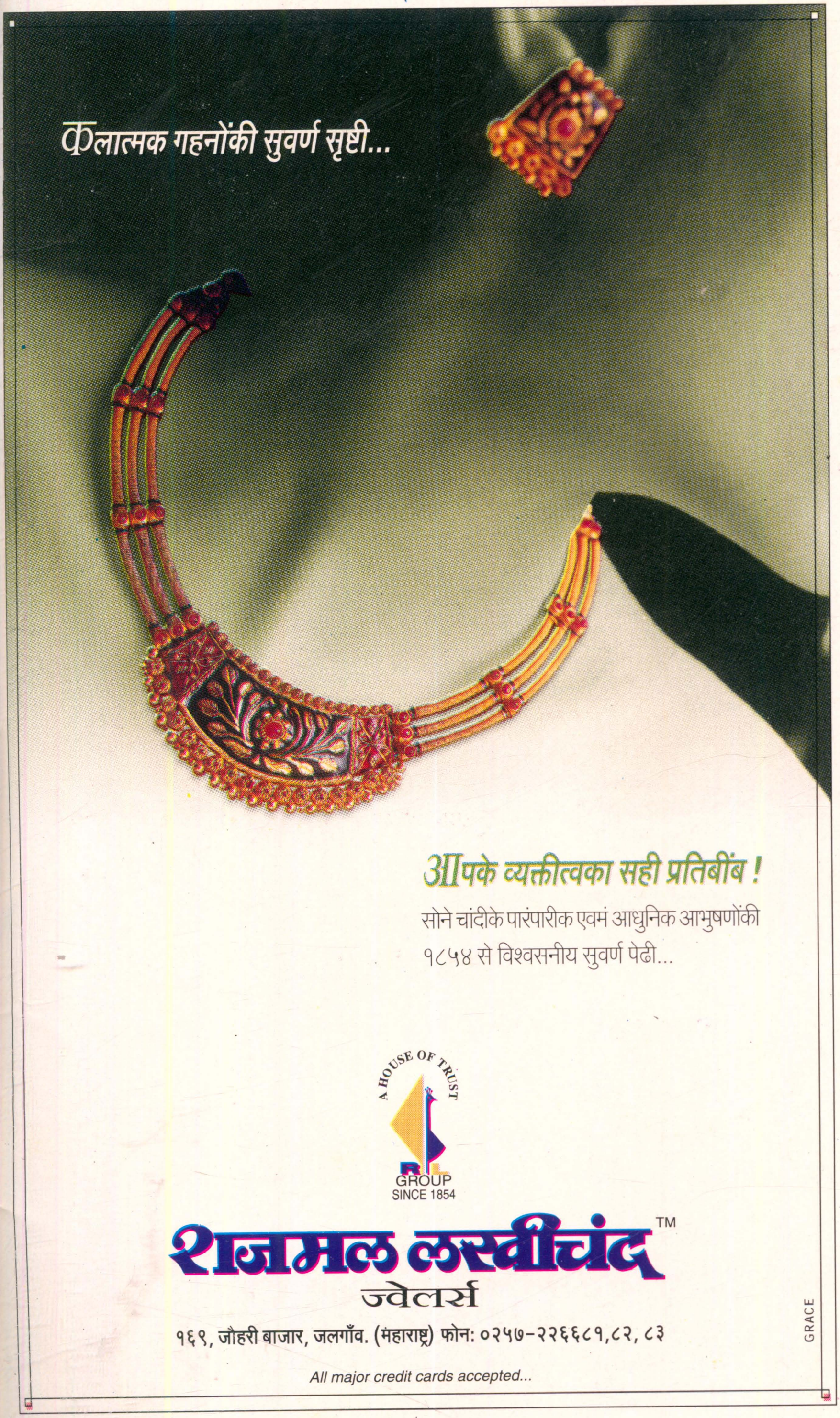
कलात्मक गहनोंकी सुवर्ण सृष्टी...
आपके व्यक्तीत्वका सही प्रतिबींब !
सोने चांदीके पारंपारीक एवमं आधुनिक आभुषणोंकी
१८५४ से विश्वसनीय सुवर्ण पेढी...
A HOUSE OF TRUST
RL
GROUP
SINCE 1854
राजमल लखीचंद ™
ज्वेलर्स
१६९, जौहरी बाजार, जलगाँव. (महाराष्ट्र) फोन: ०२५७-२२६६८१,८२, ८३
All major credit cards accepted...
GRACE

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त पंजीकृत संख्या 3653/57 डाक पंजीयन संख्या RJ/2803/02

Home next to everything you need.
And far from everything you don't.

KALPATARU HABITAT
DR. S.S. RAO ROAD, PAREL

- Twin 23 storeyed luxury apartment blocks
- 2 &3 BHK apartments and 4 BHK penthouses
- Swimming pool, clubhouse & gym
- Squash court & tennis court
- Landscaped gardens & modern security systems

KALPATARU RESIDENCY
OPPOSITE CINE PLANET, SION CIRCLE

- Premium 18 storeyed towers with 2 & 3 BHK flats
- Swimming pool, squash court & gym
- Clubhouse, party lounge & landscaped gardens
- Basement and open car parking
- Tower A nearing completion

KARMA KSHETRA
NEAR SHANMUKHANANDA HALL, KING'S CIRCLE

- 25 storeyed tower with 2 wings
- 2 BHK apartments
- Landscaped gardens
- Ample car parking and modern security systems

Centrally located, they are near schools, banks, supermarkets, movie halls... And once you step in, you'll leave the hectic world outside. There'll be just you and a feeling that says, 'Relax, you are home'.

The projects are under construction/nearing completion. For details call 281 7171/282 2679/284 4102.

KALPA-TARU

111, Maker Chambers IV, Nariman Point, Mumbai 400 021.
Fax: 204 1548/288 4778. E-mail: sales@kalpataru.com or
visit us at www.kalpataru.com

प्रकाशचन्द डागा, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर की ओर से संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिन्टिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशचन्द डागा द्वारा प्रकाशित तथा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर (राज.) से प्रकाशित। प्रधान सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।